मुद्रकः—पण्डित छज्जूराम शास्त्री
भारद्वाज प्रिंटिंग प्रेस, सैदमिट्ठा बाज़ार, लाहौर ।

❋ भूमिका ❋

स्त्रियों की महानता के विषय में किंचित् भाव।

इस पुस्तक के लिए समय पर भूमिका प्रस्तुत न होने के कारण हम निम्नलिखित पृष्ठों में किञ्चित्भाव प्रकाशित करते हैं जो समय २ पर हमारी लेखनी के द्वारा प्रकाशित होते रहे हैं। इस में सन्देह नहीं कि यह अपनी गम्भीरता के विचार से मनोरञ्जन और शिक्षादायक प्रमाणित होंगे।

स्त्री समाज।

यदि मनुष्य को स्त्रियों की सङ्गत प्राप्त न हो तो इस में सन्देह नहीं, कि यह पशु से भी निम्न बन जाय मानवी सभ्यता की सम्पूर्ण खूबियों का समूह स्त्रीजाति है, और कदाचित् यही कारण होगा कि संस्कृत में जितने शब्द नेकियों और योग्यताओं के लिए व्यवहारित (मुस्तामिल) होते हैं वह सब स्त्रीलिङ्ग होते हैं। जो लोग अभी ज़िन्दगी की प्रारम्भिक मञ्ज़िल में हैं, उन के लिए विशेष कर स्त्रियों की सङ्गत अमृत का प्रभाव रखती है। माना कि कुछ आयु व्यतीत करने पर मनुष्य पूर्ण विद्वान् बन कर स्त्री की संगत के बिना भी रह सकता है परन्तु नव युवकों के हृदयों के

लिए ईश्वर भक्ति के पश्चात् कोई अन्य प्रेमास्पद हमें दे
दिखाई नहीं देता, जो उन के हृदयों को आकर्षित कर
सन्मार्ग पर चला सके, प्रेमवती युवती ही उस को वदी
बचा सकती है। और सद्कार्य्यों में प्रवृत्त कर सकती है
प्रायः लोग कहते हैं, कि स्त्री का सम्बन्ध दुःख और चिन्त
का हेतु होता है, किन्तु स्मरण रहे, कि निर्जनता का जीव
और सारी आयु कुमार रहनें की अवस्था सच्चा खुशी
सच्चा सुख नहीं देती। माना कि एक साधारण जन रात
दिन उत्तम पुस्तकों के अध्ययन आदि में व्यस्त रह कर
अपना समय काट सकता है। परन्तु यह प्राकृतिक नियम है
कि प्रत्येकजन इस बात का इच्छुक पाया जाता है, कि कोई
उस का सच्चा मित्र हो जिस से वह अपना दुःख सुख कह
सके। और वृद्धावस्था की निराशा-प्रद आयु में लड़के वाले
इर्द गिर्द रहें ताकि उस का दुःख अनुभव न हो सके।

युवती की मधुर मुस्कान।

जिस तरह थका मांदा पथिक बादलों के परदे से निक-
लते हुए सूर्य्य को देख कर खुश हो जाता है उसी प्रकार
दिन भर परिश्रम करने वाला पुरुष जब शाम को घर आता
है तो अपनी मुस्कराती हुई प्रिय पत्नी के सुन्दर मुख को
देख कर दिन भर की मांदगी भूल जाता है। विचारा दिन
भर दफ्तर में काम करता रहा। स्वामी की आज्ञा मानता रहा
छुट्टी पाते ही जल्दी २ बस्ता बांध घर की ओर [illegible]

उत्तम नारी है। यह वह देवी है, जो उसकी सच्ची रक्षा करती है यह वह मन्त्री है जो उस को सच्चे दिल से भला व बुरा जताती रहती है, यह वह निर्मल चन्द्रमा है, जिस की ज्योतिष्णा से सारा घर सुशोभित रहता है। इसकी सरलता इस का भोलापन, इस की प्यार की चितवन, इस की सच्ची सहानुभूति की बातें आह! यह सब ऐसे रत्न हैं कि जिन का दुनियां में कोई मूल्य नहीं हो सकता। इस के परिश्रम और प्रबन्ध से घर में सच्चा सुख और शान्ति आती है गुलाब की कली की भान्त खिलने वाले अधर पवित्र से सहानुभूति के कोष (ख़जाना) की कुञ्जी हैं। पति इस की मधुर कोमल वाणी को सुनकर अपना दुःख भूल जाता है। यह इस संसार को स्वर्गधाम के तुल्य बना देती है। परमेश्वर इस की सच्ची प्रार्थनाओं से प्रसन्न होकर इस के पति और परिवार पर दया करते हैं।

स्त्रियों पर विश्वास करो।

जब तुम पर कोई आपत्ति पड़े तो तुरन्त अपनी स्त्री को उससे सूचित करो, यह कदापि न समझो कि वह अज्ञान और मूर्ख है स्त्रियों की मानसिक शक्ति स्वभावतः पुरुषों की अपेक्षा उन्नत शील होती है। देखो कन्याएं विवाहित होकर दूसरे घर में जाती हैं और, अपने अच्छे बर्ताव से सब को वश में कर लेती हैं पुरुष चाहे कितना ही पढ़ा लिखा हो लेकिन यहां प्राकृतिक चतुरता का प्रश्न आता है, यहां स्त्री

ी को उच्च पद दिया जाता है। तुम अपनी माता भगिनी श्री योग्य कन्या से अपनी कठिनाईयों के समय सम्मति लो और तुम देखोगे कि वह किस प्रकार तुम्हारी कठिनाईयां को निवारण करने की मति देती हैं। स्त्री घर की महारानी और पुरुष की सच्ची मन्त्री है, उसे कोई बात गुप्त न रखनी चाहिए, जहां पुरुष स्त्रियों का सन्मान विश्वास करते हैं, वहां कदाचित् ही कोई दुःख आता है, स्त्रियां तो छोटी सी छोटी बातें अपने पतियों से कह देती हैं, परन्तु अज्ञान पति ऐसा नहीं करते। उन को इसका दण्ड भी मिलता है जहां दो हृदयों के बीच में अनेकता रहती है वहां पारिवारिक जीवन का सुख प्राप्त नहीं होता। परस्पर प्रम और विश्वास की बहुत बड़ी आवश्यकता है। सांसारिक कार्य्यों में अविवाहित जन बहुत कम कृतकार्य्य होते हैं इसी लिए विवाह सूत्र में बन्धने की बड़ी आवश्यकता है, बहुधा मूर्ख स्त्रियों को तुच्छ समझते हैं, यह उन की महाभूल है।

॥ चौपाई ॥

जो नारी की निन्दा करहीं।

महा अधम सो प्राणी अहहीं॥

(ईशानदेव)

तुम इस की परीक्षा करके देखो, किसी गूढ़ विषय में उस से सम्मति लेकर देखो तुम किस की बुद्धिमानी को देख कर चकित होंगे कि किस खूबी से तुम्हारी कठिनता

निवारण करने की सलाह देती है उत्तम स्त्री सुख दु
विजय पराजय आदि में पुरुष की साथी होती है, फि
कितनी मूर्खता की बात है, कि तुम उस को सच्चा साथ
नहीं बनाते हो यदि यह चाहते हो कि दाम्पत्य में गहरा प्रे
हो तो उसका विश्वास करें और फिर तुम को कभी दुः
का अवसर न मिलेगा ॥

स्त्रियों की बुद्धिमानी ।

एक कहानी

अकबर ने बीरबल से कहा कि कल तुम दो ऐसे जन
हाज़िर करो, जिन में से एक अत्यन्त वफादार हो औ
दूसरा अत्यन्त बे वफा । यदि ऐसा न करोगे तो तुम्हारा प
छीन लिया जायेगा। बेगम साहबा अपने भाई की सिफारिश
कर रही है, यही बात उस से कही जायेगी जो कृतकार्य
होगा वही वज़ीर रहेगा ॥

बीरबल को बहुत शोक हुआ घर पर आकर चार पा
पर पड़ रहे उन की कन्या ने पूछा-पिता जी क्यों दुखी हो
बीरबल ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। कन्या ने मुस्कराक
कहा-यह कौनसी मुश्किल बात है, आप भोजन करें कल
दरबार के समय में ऐसे दो जन आप के साथ कर दूंगी।
बीरबल कन्या बुद्धिमान् है इसलिए प्रसन्नचि

अपनी माता का सन्मान करो।

जिस की माता जीवत हो। वह सचमुच बड़ा भाग्यवान है, क्यों जिस श्रोत से प्रकृत सहानुभूति व प्यार का क्षीर बहता था। वह अभी तक शुष्क नहीं हुआ। शास्त्र कहते हैं कि माता का स्वत्व (हक़) पिता और आचार्य से भी अधिक है। क्यों? इस लिए कि जिस अस्तित्व से तेरा शरीर बना है वह अस्तित्व माता का है और माता ने जिस प्रकार तेरा पालन पोषण किया है वह सब से अधिक आत्म त्याग से किया है।

यद्यपि तुम बुद्धिमान् और विद्वान हो। परन्तु तो भी अपनी माता से सम्मति लिया करो, यदि सम्भव हो तो उस की सेवा करके उस का ऋण उतारने की चेष्टा किया करो तुम्हारी किञ्चित् प्रसन्नता और मुस्कराहट से माता का हृदय आनन्दित हो जायेगा और उस की प्रसन्नता का प्रभाव तुम्हारे हृदय तक पहुंच कर तुम्हें प्रसन्न रखेगा।

उस की सम्मति का आदर और सन्मान करो, यह कदापि न समझो कि वह बूढ़ी और बावली हो गई है तुम्हारी कालेज की शिक्षा सामायिक ज्ञान आदि प्रेमभाव के सन्मुख अपूर्व रहेंगे, क्योंकि उस में सत्ता रहती है और यह अधिक तर कृत्रिम है माता के धार्मिक विश्वासों की भी निन्दा न करो, चाहे तुम्हारे निकट उस का विचार भ्रम

चौपाई—सो बालक जग धन्य कहावे,
मात पिता सेवा कमावे ॥ (ईशानदेव)

जो जन अपनी माता की सेवा और सन्मान करते हैं, वह श्रद्धा की दृष्टि से देखे जाने के योग्य हैं, क्योंकि वह संसार में सब से अधिक सुखी सब से अधिक भाग्यशाली और सब से अधिक नेक हैं ॥

स्त्रियों की शिक्षा।

स्त्रियों की शिक्षा चाहे जितनी अधिक हो, किन्तु जब तक उन में गृह सम्बन्धी कार्य्यों के प्रबन्ध की योग्यता न हो, तब तक उन की शिक्षा अपूर्ण समझनी चाहिए, माना कि राज काज सम्बन्धी काम के लिए अपेक्षा कृत अधिक मानसिक शक्ति की आवश्यकता है। परन्तु गृह सम्बन्धी प्रबन्ध के लिए भी यह सब गुण नितान्त आवश्यक है जिस प्रकार दफ्तरों में वह जन जो छोटे पद से उच्च पद पर पहुंचे हों, दफ्तर के सब कामों को बहुत अच्छी तरह से सम्पादन करते हैं, उसी प्रकार लड़कियों के लिए भी आवश्यक है कि गृहस्थ आश्रम में प्रविष्ट होने से पहले उस के नाना प्रकार के कार्य्यों से अभिज्ञता लाभ करें। आज कल के पढ़े लिखे बाबू हिन्दुओं की प्राचीन सभ्यता पर ठट्ठा (हंसी) करते हैं, किन्तु यह नहीं देखते कि उन के जीवन के सम्पूर्ण प्रश्न कैसे ठीक ठाक थे। शोक ! अब वह बरताव है

चौपाई—सो बालक जग धन्य कहावे,
मात पिता सेवा कमावे ॥ (ईशानदेव)

जो जन अपनी माता की सेवा और सन्मान करते हैं, वह श्रद्धा की दृष्टि से देखे जाने के योग्य हैं, क्योंकि वह संसार में सब से अधिक सुखी सब से अधिक भाग्यशाली और सब से अधिक नेक हैं ॥

स्त्रियों की शिक्षा ।

स्त्रियों की शिक्षा चाहे जितनी अधिक हो, किन्तु जब तक उन में गृह सम्बन्धी कार्य्यों के प्रबन्ध की योग्यता न हो, तब तक उन की शिक्षा अपूर्ण समझनी चाहिए, माना कि राज काज सम्बन्धी काम के लिए अपेक्षा कृत अधिक मानसिक शक्ति की आवश्यकता है । परन्तु गृह सम्बन्धी प्रबन्ध के लिए भी यह सब गुण नितान्त आवश्यक है। जिस प्रकार दफ्तरों में ब [illegible]
पहुंचे हों, दफ्तर के सब
सम्पादन करते हैं,
श्यक है
नाना प्रकार
के पढ़े
(हंसी)

फैलता जायगा, उतना ही हिन्दूपन की असली खूबियां दूर होती जाएगी गृहस्थ आश्रम के सच्चे सुख जो केवल हिन्दू घरों का भाग है विलुप्त हो जायेंगे।

सुशिक्षित हिन्दू प्रायः अपनी बुद्धि और ज्ञान पर अभिमान किया करते हैं, किन्तु यथार्थ देखा जाय, तो हिन्दुओं की जातिय रक्षक पुरुष नहीं किन्तु स्त्रियां हुई हैं। और इस प्रकार की स्त्रियां जिन को ऐसी विशेष शिक्षा दी जाती थी अक्षर ज्ञान में रहित होकर भी कर्मकाण्ड की सारी बातों को ऐसा साङ्गोपाङ्ग जानती थीं, कि कदाचित् मुश्किल से कोई पुस्तक बना सकती है शास्त्र व पुराण को घटनाएं इन की समस्त कण्ठाग्र थीं वह स्वयं पुस्तक स्वरूप थीं। आवश्यकता के समय पुरुष उन से सम्मति लिया करते थे। वह जानती थीं कि किस अवसर पर क्या करना चाहिए आशा है पाठक गण हमारी बातों को अधिक समझेंगे। शोक है कि प्राचीन हिन्दू नारी नसल की अब क्षति थी हो रही है और उस की रक्षा उस समय तक सम्भव है कि जब तक कि नई शिक्षा विधि में प्राचीन शिक्षा विधि संयुक्त न की जाय। और स्मरण रहे कि बिना इस के सारी जाति को शोक करना पड़ेगा॥

सच्ची माता कैसी होती हैं।

चीन में दो स्त्रियां एक लड़के के लिए झगड़ रही थी, और जब किसी प्रकार झगड़ा न मिटा तो दोनों न्यायाधीश

फैलता जायगा, उतना ही हिन्दूपन की असली खूबियां दूर होती जायगी गृहस्थ आश्रम के सच्चे सुख जो केवल हिन्दू घरों का भाग है विलुप्त हो जायेंगे।

सुशिक्षित हिन्दू प्रायः अपनी बुद्धि और ज्ञान पर अभिमान किया करते हैं, किन्तु यथार्थ देखा जाय, तो हिन्दुओं की जातीय रक्षक पुरुष नहीं किन्तु स्त्रियां हुई हैं। और इस प्रकार की स्त्रियां जिन को ऐसी विशेष शिक्षा दी जाती थी अक्षर ज्ञान में रहित होकर भी कर्मकाण्ड की सारी बातों को ऐसा साङ्गोपाङ्ग जानती थीं, कि कदाचित मुश्किल से कोई पुस्तक बना सकती है शास्त्र व पुराण की घटनाएं इन को समस्त कण्ठाग्र थीं वह स्वयं पुस्तक स्वरूप थीं। आवश्यकता के समय पुरुष उन से सम्मति लिया करते थे। वह जानती थीं कि किस अवसर पर क्या करना चाहिए आशा है पाठक गण हमारी बातों को अधिक समझेंगे। शोक है कि प्राचीन हिन्दू नारी नसल की अब हानि भी हो रही है और उस की रक्षा उस समय तक सम्भव है कि जब तक कि नई शिक्षा विधि में प्राचीन शिक्षा विधि संयुक्त न की जाय। और स्मरण रहे कि बिना इस के सारी जाति को शोक करना पड़ेगा॥

सच्ची माता कैसी होती हैं।

चीन में दो स्त्रियां एक लड़के के लिए झगड़ रही थीं, और जब किसी प्रकार झगड़ा न मिटा तो दोनों न्य

(मजिस्ट्रेट के पास गईं, दोनों ही कहती थीं, कि बच्चा मेरा है। दोनों ही की बातें सची और युक्ति (दलील) के अनुसार मालूम देती थीं। न्यायाधीश को फैसला करना कठिन हो गया। निदान उस ने इस गूढ़ विषय में अपनी पत्नी से सम्मति मांगी उस ने कहा थोड़ी देर आप ठहर जायं मैं अभी सोच कर इस का उतर दूंगी। पश्चात् उस ने नौकर को आज्ञा दी कि बालक के शरीर के लगभग की मछली शीघ्र नदी से पकड़ ला नौकर ने वैसा ही किया। फिर उस ने पति से कहा कि आप बालक मुझे देदें और दोनों स्त्रियों को कमरे के बाहर रहने दें मजिस्ट्रेट ने ऐसा ही किया तब उस ने बालक के वस्त्र उतार कर उस मछली को पहना दिये और नौकर को आज्ञा दी कि दोनों स्त्रियों समेत नदी के तट पर जा और उन के सन्मुख इस बालक को नदी में फैंक दे। नौकर ने आज्ञा पूरी की। जब बालक-रूपी मछली पानी में फेंकी गई, तो यह कपड़ों में लिपटी होने के कारण उछलने और तड़पने लगी। इस का प्रभाव दोनों स्त्रियों पर क्या पड़ा? यह कि एक तो चुपचाप बैठी हुई तमाशा देखती रही और दूसरी चिल्ला कर बेधड़क नदी में कूद पड़ी ताकि अपने प्यारे बच्चे को डूबने से बचाए न्यायाधीश की स्त्री ने अपने पति से कहा यह बच्चे की सची मां है। इस को शीघ्र नदी से निकलवाओ जिस में बिचारी ममता की मारी डूब न जाय, न्यायाधीश ने तुरन्त उस को नदी से निकलवाया और अपनी

स्त्री की बुद्धिमानी की प्रशंसा की। झूठी मां यह दशा देख कर वहां से चलती बनी न्यायाधीश की स्त्री ने बच्चे को रेशमी वस्त्र पहनाए और फिर उस सच्ची माता की गोद में सौंप दिया दुखित माता ने अपने बच्चे को छाती से लगा अपने हृदय को शीतल किया और न्यायाधीश की स्त्री को कोटि २ धन्यवाद और आशीर्वाद देती हुई अपने घर सिधारी॥

उत्तम भार्य्या॥

यह पति प्रायः सतपथ से भ्रष्ट होते हैं, जो धर्मिणी से घृणा करते हैं। आह! यदि उन में इतनी ... कि वह अपनी उत्तम भार्य्या की प्रेम वाणी को ... कदाचित् इस प्रकार नीचता और पाप कूप में न ... स्वभावतः बुद्धिमान् दूरदर्शी और कोमल हृदय होती ... पुरुष उस की बुद्धि को कदापि नहीं पहुंच सकता। स्त्री ... और पवित्रता का रूप है और सचमुच श्रद्धा और ... मान के योग्य है। यदि स्त्रीजाती संसार में न होती तो ... नियां किस अवस्था में होतीं? असभ्यता कदर्य्यता और नीच... से भर पूर होती। चहुं दिश पशु लीला दिखाई देती। स्त्री सचमुच देवी है जो पुरुष जाति के चाल चलन आचार व्यवहार आदि में सुन्दरता माधुर्य्य कोमलता और पवित्रता

को देखो तो जान लो की इस को स्त्री का सत्सङ्ग अथवा अपनी अधम प्रकृति से उस के उत्तम उपदेश पर ध्यान नहीं देता स्त्रियां बहुत दूरदर्शी और उन्नत चेता होती हैं चतुर से चतुर पुरुष भी उन से जय नहीं पाता जो पुरुष अपनी पत्नी की सम्मति पर चलेगा वह कभी दुःख का भागी न बनेगा। एक अंग्रेज़ कवि ने स्त्री की महिमा विषय में इस प्रकार अपने भाव प्रकाश प्रगट किए हैं जिन का सारांश यह है :—

तू है रूप की देवी प्यारी, जग शोभित है तुझ से।
ऐसी सुन्दरता है किस में, वरणि जाये नहीं मुझ से।
दुनियां में तू परम सुन्दरी, अति पवित्र बनि आ
भाति है प्रत्येक हृदय को, तेरी सुन्दरताई ॥२॥
पशुवत् होता जीवन हमारा, जो न प्रगट तू होती।
ईशानदेव छब छीन जगत में, शोभा किस विध होती।

स्त्रियों को क्या चाहिये ॥

कृश्चन ग्लोब नामी अंग्रेज़ी समाचार पत्र में तेरह स -की कन्या की कविता मुद्रित हुई है जिस में स्त्रियों के हाल का वर्णन है जिन का सारांश अनुवाद है :—

ारिश्रम करो सदा हे बहिनों, काम संवारों अपने।
ोओ, गाओ सङ्ग औरों के, क्रोधित हो हुन सुपने ॥१॥
नों सहायक पुरुषों की तुम, दुख और शोक मिटाओ।
धर्म्म ज्ञान में उन्नति होकर, सद मार्ग दिखालाओ ॥२॥
कष्ट तुम्हें जो देवे कोई, घमा करो तुम उस को।
हो बीमार दुखी और रोगी, सुख पहुंचाओ उस को ॥३॥
नारी धर्म्म कठिन है जग में, पालन करे जो कोई।
उस की समता का इस जग में, दूजा और न कोई ॥४॥
दो अहार भूकों को प्यारी, प्यासों को दो पानी।
बोलो मृदुल मनोहर बाणी, सुख की यही निशानी ॥५॥
औरों के उपकार में बीते, निशदिन समय तुम्हारा।
कह ईशान देव सब विधि से, जीवन धन्य तुम्हारा ॥६॥

उपहार
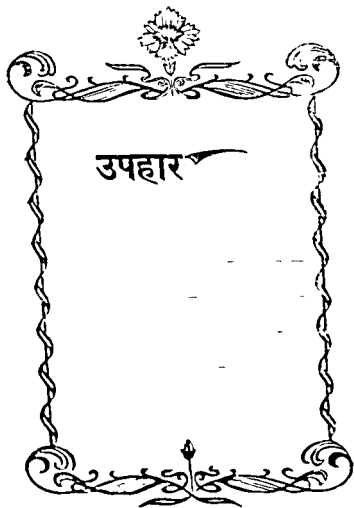
❋ सती वृत्तान्त ❋

वेदवती

दोहा—पतिव्रता के एक है, व्यभिचारिन के दोय।
पतिव्रता व्यभिचारिनी, कहो क्यों मेला होय ॥१॥
पतिव्रता को सुख घर्ना, जाके पति है एक।
मन मैली व्यभिचारिनी, जाके खसम अनेक ॥२॥
चढ़ी अखाड़े सुन्दरी, माण्डा पिया मो खेल।
दीपक जोया ज्ञान का, काम जरे ज्यों तेल ॥३॥
पतिव्रता व्यभिचारिनी, एक मन्दिर में वास।
वह रङ्ग राती पीव की, वह घर २ फिरे उदास ॥४॥
स्वामी मेरा सुलषणा, मैं पतिव्रता नारि।
दर्शन देव कृपा करो, मेरे निज भर्तार ॥५॥
मैं अबला पिय पिय करूं, निर्गुण मेरे जीव।

सुख सोंही पीव बिन, और न देखूं अंत ॥६॥
नाम न रटा तो क्या हुआ, जो अन्तर है हेत
पतिव्रता पति को भजे, कबहुं नाम नहि लेत ॥
सुरत समानी नाम में नाम, किया परकाश ।
पतिव्रता पति को मिली, पलक न छांड़े पास
पतिव्रता के एक पिय, पिय बिन और न कोय
आठ पहर निरखत रहे, सोई सुहागन होय ॥
पतिव्रता पति को भजे, तजे आन की आश ।
ताहिन कबहुं परिहरे, कबहुं न होय निराश ॥
पपिहा का मन देखकर, धीरज रहे न रंच ।
मरते दम जल में पड़ा, तौन धारी चुंच ॥११
जो सेवक समर्थ का, कबहुं न होय अकाज ।
पतिव्रता नांगी रहे, तो ताहि पति को लाज

(कबीर सा

मनुष्य इतिहास में लङ्केश रावण का नाम मह
की श्रेणी में लिखा रहेगा। इस पापी ने अपने अत्याच
सारे संसार को पीड़ित कर दिया, उस की दुष्क्रिया
जगत् चिल्ला उठा, राजा से लेकर प्रजा तक सभी पीड़ि
परन्तु इसके बल और पराक्रम के आगे किसी की

प्राकृतिक सौंदर्य्य का तमाशा दिखला रही थीं उस चोटी पर मनुष्य का पहुंचना कठिन था, रावण दूर से उस की शोभा देखकर वहां चला गया। वहां जाकर और भी अधिक शोभा दिखाई दी, दूर से बर्फ की सफेदी के भिन्न और कुछ न दिखाई दिया था वहां जाकर कुछ और ही अद्भुत दृश्य दिखाई दिया।

पहाड़ के शिखर पर एक छोटा सा उद्यान (बाग) था जिस के मध्य में एक छोटी सी कुटिया बनी हुई थी जिसके इर्द गिर्द फूलों की लताएं सुगन्धित पौदे लगे हुए थे। और यद्यपि सांसारिक ठाट बाट की चीज़ों का नाम व निशान न था, तथापि वह हृदय को बहुत आकर्षणीय प्रतीत होती थी, उस के चारों ओर बहुत से ऐसे वृक्ष थे, जो फूलों और फलों से लदे हुए थे। समीप ही निर्मल और मीठे जल का झरना बह रहा था, मृग झुण्ड आदि किलोलें कर रहे थे।

रावण ने इस सुन्दर कुटिया को देखकर अनुमान किया, कि कदाचित् वहां विश्रवण छुपा होगा, यह सोच कर वह कुटी में घुस गया, उस में एक महा तेजोमय और परम सुन्दरी स्त्री दिखाई दी। यद्यपि उसके शरीर पर मृग छाला के सिवाय और कोई उत्तम वस्त्र व आभूषण न था तथापि उस की शोभा यह प्रमाणित कर रही थी। कि स्व रूपवान् को सुन्दर वस्त्रों और आभूषणों की आवश्यकता नहीं वह वस्त्रों और आभूषणों के बिना भी सब का मनहरण कर सकता है।

किया और बैठने के लिए आसन दिया, पश्चात् सत्य...
पूर्वक उत्तर दिया कि मैं वेदवती हूं, मेरे पिता का नाम ब्र...
ऋषि कोसध्वज था जो बृहस्पति के पुत्र थे और ज्ञान वि...
में उन के समान थे। जिन दिनों मेरे पिता वेदों के अध्ययन...
में व्यस्त रहते थे उन्हीं दिनों मेरी उत्पत्ति हुई थी। पिता...
मुझ को सद्शास्त्र पढ़ाए और मेरा नाम वेदवती रक्खा।...
नाम उन्होंने अनायास नहीं रखा था, किन्तु इसका विशे...
कारण था, वह यह कि बाल्यकाल से मुझे वेदों के पढ़...
और सुनने की रुचि थी इस लिए वह मुझ को वेदवती क...
कर सम्बोधन करते थे। जब मैं युवा अवस्था को पहुंची...
गन्धर्व, राक्षस, यक्ष, पन्नग आदि विविध श्रेणियों के र...
मेरे इच्छुक बने परन्तु मेरे पिता ने किसी के साथ मे...
विवाह करना स्वीकार न किया, क्योंकि उसने मुझ में पवि...
जीवन व्यतीत करने के लक्षण देखे थे, और वह चाहता था...
मैं अपना ध्यान परमात्मा की ओर लगाऊं उसी को अप...
पति समझूं और उसी के प्रेम का दम भरूं। मुझ को शि...
भी इसी प्रकार की मिलती रही थी। और वह मेरी इच्छ...
मेरे विचार, मेरे साहस के लिए उचित थी। और लोग ...
फिर गए परन्तु दैत्यों के राजा शम्भू को मेरे पिता का इन्का...
बुरा लगा, और रात्रि के समय जब मनःप्राप्ति सो रहा था...
वह चोर की तरह उसके शयन स्थान में दाखिल हुआ और...
तीक्ष्ण शस्त्र से उसे वध कर दिया। जब प्रभात हुई मेर...

जहां काम तहां नाम नहीं, जहां नाम नहीं काम।
दोनों कबहुं ना मिले, रवि रजनी यक ठाम ॥४॥
कहता हूं कह जात हूं, समझे नहीं गंवार।
वैरागी, गृह कोई, कामी वार न पार ॥५॥
रज वीरज की कोठरी, ता पर साजा रूप।
सत्य नाम बिन डूबसी, कनक कामनी कूप ॥६॥
नारी निरखि न देखिए, निरखि न कीजे दौर।
देखे ही ते विष चढ़े, मन आवे कुछ और ॥७॥
जो कबहुं कर देखिए, वीर बहिन के भाय।
अठ पहर अलगा रहे, ताको कालन खाय ॥८॥
नारि नशावे तीन गुण, जो नर पासे होय।
भगत, मुक्ति, निजध्यान में, पैठ सके ना कोय ॥९॥
कामी कुत्ता तीस दिन, अन्तर होय उदास।
कामी नर कुत्ता सदा, छै ऋतु बाहरा मास ॥१०॥
कामी कबहूं न हरि भजे, मिटे न संशय शूल।
और गुनह सब बख्शा हूं, कामी डालन मूल ॥११॥
काम क्रोध सूतक सदा, सूतक लोभ समाय।
[illegible] तब यह सूतक जाय ॥१२॥

है अब कुछ भी होजाये परन्तु मैं उस से विमुख नहीं हो
कती हूं।

हा-प्रेम पन्थ में पग दिया, जग की आशा खोय।
अब पीछे नहीं लौट हूं, होनी होय सो होय॥

मैं निश दिन उसी के एक ध्यान में मस्त हूं। उस के
वाय और किसी को न देखती हूं न देखना चाहती हूं
ौर उस के रङ्ग में इतनी रङ्ग चुकी हूं कि अब दूसरा रङ्ग
झ पर नहीं चढ़ सकता।

लाली अपने लाल की, जित देखूं तित लाल।
लाली देखन मैं गई, हो गई मैं भी लाल॥

रावण को सती की बातें सुन कर निश्चय हो गया कि
यह किसी तरह उस की बात मानने वाली नहीं है, उस ने
अपना हाथ बढ़ाया कि वेदवती को ज़बरदस्ती पकड़ ले जाए
उस दुष्ट राक्षस ने सती के लम्बे केश पकड़ लिए, वेदवती
उछल कर अलग खड़ी हो गई और अपने केशों को कटार से
काट कर अलग फेंक दिया और क्रोधित होकर कहने लगी
नादान नीच राक्षस! तू नीति भी नहीं जानता, पुरुष कभी
स्त्री पर बलात्कार नहीं करता और स्त्री भी तपस्विनी, दुष्ट तू
मनुष्यत्व से पतित हो गया है। तू ने मेरे जिस अङ्ग को स्पर्श
किया है, मैं उस को काट कर फेंक देती हूं और इस शरीर
को भी तज देती हूं। मैं चाहती तो अभी इस कटार

तेरे कलेजे में झोंक देती परन्तु शास्त्र आज्ञा नहीं देते, स्त्री पुरुष पर हाथ उठाये अथवा पुरुष स्त्री पर हाथ चलाए हां मैं तुझ को शाप भी नहीं देती, क्योंकि तपस्वी को शाप की आज्ञा नहीं है। परन्तु मैं इतना कह देती हूं कि दूसरे जन्म में फिर स्त्री हूंगी और तेरे अधम अस्तित्व का विनाश मेरे कारण होगा। यदि मैंने अग्निहोत्र विधि पूर्वक किया है यदि मैं सच्चे धर्मात्मा की धार्मिका कन्या हूं, यदि वैदिक धर्म को मैंने पालन किया है, तो स्मरण रख मैं अपनी इच्छा के अनुसार दुनिया में आऊंगी और उस वंश को नाश कराऊंगी, जिस के एक दुष्ट व्यक्ति ने दुर्बल स्त्री के केश पकड़ कर स्त्री जाति का अपमान किया है। रावण! आगामी के लिए ध्यान रख अब ऐसा अपराध तुझ से न होने पाए और तय्यार रह उस मृत्यु के लिए जो मैं शीघ्र पैदा होकर तुझ पर लाऊंगी।

रावण सुन्न होकर खड़ा रह गया, जिस के नाम से योधा कांपते थे, वह दुर्बल स्त्री की बातों को सुन कर डर गया। वेदवती उस के देखते २ चिता पर बैठ गई, लकड़ियों का ढेर कुटी के पास मौजूद था और जब उस में आग लगी तो उस की ज्वाला आकाश तक पहुंची और इस प्रकार यह देवी जिस के धर्मबल का पवित्र अभिमान प्रत्येक आर्य्य स्त्री पुरुष को होगा, अग्नि के विमान पर बैठ कर स्वर्गधाम को सिधारी। स्थूल शरीर को फटे पुराने वस्त्र की तरह

२-शबरी मिलनी।

दोहा

प्रेम पियाला जो पीए, सीस दक्षिणा देय।
लोभी सीस न दे सके, नाम प्रेम का लेय ॥१॥
प्रेम २ सब कोई कहे, प्रेम न जाने कोय।
आठ पहर भीना रहे, प्रेम कहावे सोय ॥२॥
प्रेम पियारे लाल सो, मन्दे कीजे भाव।
सतगुरु के परताप से, भला बनाहे दाव ॥३॥
प्रेम चुनरी पहन कर, धीरज काजल देय।
शील सिन्दूर भराये कर, पिय का सुख लेय ॥४॥
पीया चाहे प्रेम रस, राखा चाहे मान।
एक म्यान में दो खड्ग, देखा सुना न कान ॥५॥
पिया रस पिया तब जानिये, उतरे नहीं खुमार।
नाम अमल माता रहे, पिये अमी रस सार ॥६॥
कबीर पियाला प्रेम का, अन्तर लिया लगाय।
रोम राम में रम रहा, और अमल क्या खाय ॥७॥

* शबरी किष्किन्धा देश के किसी ऐश्वर्य्यवान् भील की कन्या थी, स्वभाव की बहुत सीधी साधी थी। उस में ईश्वर भक्ति का संस्कार बाल्यकाल में ही दिखाई देता था जब उस के गांव के आस पास कोई साधु या महात्मा आ जाता, शबरी बड़े प्रेम और अनुराग से उस से मिलती और जहां तक हो सकता उस की सेवा करती और उस की बातचीत श्रद्धा के साथ सुनती उस का यह स्वभाव माता पिता को प्रिय न था, वह चाहते थे, शबरी उन के पद चिन्ह पर चले और जिन बातों को भील अच्छा समझते हैं उन को सीखे परन्तु उस के पूर्व-जन्म के संस्कार कुछ और प्रकार के थे, हम देखते हैं प्राय लड़के अपने माता की प्रकृति के विरुद्ध स्वभाव लेकर जन्म लेते हैं और न केवल आचार व्यवहार से पृथक रहते हैं किन्तु बहुधा उन की सकृत से भी अलग हो जाते हैं। यह मनुष्य जीवन की घटना है जिस की व्याख्या सिवाय कर्म और पूर्व जन्म के संस्कार के और किसी वैज्ञानिक सिद्धान्त से नहीं हो सकती। हम प्रकृति रूप से देखते हैं बाप बुरा है। माता के आचरण भी अच्छे नहीं, परन्तु सन्तान अत्यन्त शीलवान् और धर्म्मवान् उत्पन्न

---

* शबरी का वर्णन रामायण और भक्तमाल में भी है हमने इन्हीं दोनों ग्रन्थों के आधार पर इसका वृत्तान्त वर्णन किया है।

होती है। सम्भव है रङ्ग स्वरूप समान हों, सम्भव है
सी बातें मिलती जुलती हों, परन्तु जिन लक्षणों से
दूसरे को पहचान सकते हैं उन में आकाश पाताल का
आ जाता है। ऋषि के घर राक्षस और राक्षस के घर ऋ
की कहावत हम प्रायः सुनते रहते हैं। किन्तु ऐसा क्यों हो
है, इस का कोई उत्तर नहीं है सिवाय वैदिक धर्म के
सब यहां आकर चुप हो जाते हैं और इस गूढ़ तत्व
यथोचित अर्थ नहीं बताते। यथार्थ यह है, कि जीवात्मा
पहले जन्म में जैसे कर्म होते हैं उन का संस्कार हृदय
रहता है। काम करने का वही स्वभाव पहले से पड़ा रहता
और वह जहां इस दुनियां में आया उसी ढङ्ग उसी विधि औ
उसी मार्ग पर चलने लगता है यह बात इस जन्म की सङ्ग
या शिक्षा की नहीं है। यदि आप विचार पूर्वक नन्हें बच्चों
आचार का निरदिक्ष करें तो सहज में विदित होगा, कि य
विशेषता उन में स्वयम् वर्त्तमान रहती है। और उस
अनुसार वह अपने चाल चलन को एक विशेष अनुमान प
बना लेते हैं।

शबरी में स्वभावतः इस प्रकार की रुचियां वर्त्तमान थीं
वह माता पिता के आचरण को पसन्द नहीं करती थी।
किन्तु सुशील सन्तान की तरह उस ने कभी आज्ञा भङ्ग की
चेष्टा नहीं की। देश सुनती उस की
१६ सोलह वर्ष

होती है। सम्भव है रङ्ग स्वरूप समान हों, सम्भव है
सी बातें मिलती जुलती हों, परन्तु जिन लक्षणों से
दूसरे को पहचान सकते हैं उन में आकाश पाताल का
आ जाता है। ऋषि के घर राक्षस और राक्षस के घर ऋ
की कहावत हम प्रायः सुनते रहते हैं। किन्तु ऐसा क्यों हो
है, इस का कोई उत्तर नहीं है सिवाय वैदिक धर्म के ऋ
सब यहां आकर चुप हो जाते हैं और इस गूढ़ तत्व
यथोचित अर्थ नहीं बताते। यथार्थ यह है, कि जीवात्मा
पहले जन्म में जैसे कर्म होते हैं उन का संस्कार हृदय
रहता है। काम करने का यही स्वभाव पहले से पड़ा रहता
और वह जहां इस दुनियां में आया उसी ढङ्ग उसी विधि
उसी मार्ग पर चलने लगता है यह बात इस जन्म की सं
या शिक्षा की नहीं है। यदि आप विचार पूर्वक नन्हें बच्चों
आचार का निरीक्षण करें तो सहज में विदित होगा, कि
विशेषता उन में स्वयम् वर्त्तमान रहती है। और उस
अनुसार वह अपने चाल चलन को एक विशेष अनुमान
बना लेते हैं।

शबरी में स्वभावतः इस प्रकार की खूबियां वर्त्तमान
वह माता पिता के आचरण को पसन्द नहीं करती
किन्तु सुशील सन्तान की तरह उस ने कभी आज्ञा भङ्ग
चेष्टा नहीं की। वह जब कभी अच्छा उपदेश सुनती उस
अपने हृदय कर लेती यह दशा १५ सोलह

दूसरे को पदमान मकते हैं उन में आकाश पाताल का
या जाता है। ऋषि के घर राक्षस और राक्षस के घर ऋ
की कहावत हम प्रायः सुनते रहते हैं। किन्तु ऐसा क्यों
है, इस का कोई उत्तर नहीं है सिवाय वैदिक धर्म के है
सब यहां आकर चुप हो जाते हैं और इस गूढ़ तत्व
यथोचित अर्थ नहीं बताते। यथार्थ यह है, कि जीवात्मा
पहले जन्म में जैसे कर्म होते हैं उन का संस्कार हृदय
रहता है। काम करने का यही स्वभाव पहले से पड़ा रहता
और वह जहां इस दुनियां में आया उसी ढङ्ग उसी विधि
उसी मार्ग पर चलने लगता है यह बात इस जन्म की स
या शिक्षा की नहीं है। यदि आप विचार पूर्वक नन्हें बच्चों
आचार का निरीक्षण करें तो सहज में विदित होगा, कि
विशेषता उन में स्वयम् वर्त्तमान रहती है। और उस
अनुसार वह अपने चाल चलन को एक विशेष अनुमान प
बना लेते हैं।

शबरी में स्वभावतः इस प्रकार की खूबियां वर्त्तमान थ
वह माता पिता के आचरण को पसन्द नहीं करती थी
किन्तु सुशील सन्तान की तरह उस ने कभी आज्ञा भङ्ग
चेष्टा नहीं की। वह जब कभी अच्छा उपदेश सुनती उस
अपने हृदय में धारण कर लेती। यह दशा १५ सोलह व

की आयु तक बनी रही । सत्सङ्ग और साधुओं के उपदेश सुनने की रुचि दिनों दिन बढ़ती गई । पिता ने बहुत चाहा कि वह उसके कहने के अनुसार अपनी गति को बना ले परन्तु यहां कोई और ही धुन सवार थी ।

एक दिन जब माता उस के केश गुन्ध रही थी, उस ने कहा—शवरी ! मैं चाहती हूं तू बड़ी हो । भोली भाली कन्या ने पूछा—फिर क्या होगा ?

माता ने कहा—तब हम तेरे विवाह को देखेंगे ।

शवरी ने फिर प्रश्न किया—इस के पश्चात् क्या होगा ।

माता ने उत्तर दिया—तेरी सन्तान होगी, मुझ को नानी कहेगी, मैं उनको खिलाऊंगी ।

माता ने कहा—फिर तो स्वयं सपरिवार होकर अपने बच्चों का विवाह करेगी ।

कन्या थी भोली, उस ने फिर वही प्रश्न किया, जिस के उत्तर में माता ने झुंझला कर कहा—फिर क्या होगा, तू मर जायगी, तब शवरी हंसी और कहा इसी के लिये यह सब सामान है ।

कहने को तो यह एक साधारण घटना थी, माता भूल गई, परन्तु लड़की के हृदय में एक विशेष चिन्ता उत्पन्न हुई जो उसके जीवन को एक विचित्र सांचे में ढालती रही ।

इस के स्वभाव पर दिन प्रति दिन एक विशेष प्रकार का
[illegible] य आश्रम वाले अच्छा नहीं

निदान पिता ने इस के विवाह कर देने का (किया और अपनी विरादरी का एक घर भी स्थिर कर । जब यह बात शवरी से कही गई, वह लज्या से अपनी मा के पास चली गई और उस से कहने लगी " मेरा विवाह । करो, मैं ईश्वर की भक्ति करूंगी " परन्तु किस को इतनी समझ थी, जो इस भोली कन्या की बातों की ओर ध्यान देता।

माता ने कहा—नहीं तेरा विवाह होगा, इस में सन्देह नहीं लड़कियों को कभी अविवाहित नहीं रह सकतीं पराये घर की थाति (अमानत) हैं जितनी जल्दी वह अपने घर चली जांय उतना ही अच्छा है। कौन जाने आगे चलकर क्या दशा हो । शवरी विचारी चुप हो गई वह क्या कर सकती थी। वह भली भांति जानती थी। भीलों में एक जन भी ऐसा नहीं जो उस की बातों को समझ सके।

निदान उस ने मुस्करा कर अपनी माता से कहा—पिता जी पूछो क्या मेरे विवाह के दिन वह इन जीवों को बन्धन रहित कर देंगे जो निर्दयता के साथ बन्द किये हुए हैं, इस सादगी की वार्तालाप सुन कर भील खिल खिला कर हंस पड़ा, हां क्यों नहीं तू स्वयं इन को अपने हाथ से बन्धन रहित कर देना।

इस के पश्चात् फिर किसी ने कन्या विवाह विषयक बातचीत नहीं की। शवरी रात दिन ईश्वर के भजन ध्या

बहुत पसारा जिन किया, यह भी गए उदास।
माया दीपक नर पतङ्ग, भ्रम भ्रम माहि परन्त।
कोई यक हरि ज्ञानम, उभरे साधु सन्त॥

शबरी उस दिन इसी तरह देर तक मन में विचार रही। रात्रि के समय जब सब सो गये, वह जागती रही उस ने अपने मन से कहा—" मेरा प्रीतम मेरे साथ है मुझे इस और विवाह की आवश्यकता नहीं। मैं आज से उसी का नाम लेकर मां बाप के घर से निकलूंगी। माता कहती है कन्याओं को पिता के घर में रहने का अधिकार नहीं, इस लिये मैं अपने स्वामी के घर रहूंगी।" यह सोच कर वह बाहर आई और उस घर में गई जिसमें पक्षियों को उस के पिता ने पिञ्जरों में बन्द कर रक्खा था। शबरी ने पिञ्जरों के द्वारों को खोल दिया और पक्षियों से कहा—" जाओ आज मैं अपने विवाह के हर्ष में तुम्हें मुक्त करती हूं दूसरे घर में हिरण आदि पशु जो जङ्गल से पकड़ कर आए हुए बन्द थे, उन के गले की रस्सियां भी उसने खोल दीं और उन से कहने लगी। " आओ आज मैंने गृहस्थ आश्रम से मुक्ति पाई तुम भी जङ्गल में जाकर आनन्द से अपने दिन काटो।"

जब सब जीव चले गये वह गम्भीर कन्या घर से बाहर निकली मनमें डरती थी ऐसा न हो कोई उसको देख ले और बिचारी जबरदस्ती एक जन को सौंप दी जाय। वह एक

ओर को चल पड़ी। अन्धेरी रात्रि थी हस्त को हस्त नहीं सूझता था। परन्तु इस का सत्य संकल्प इस एक ओर को लिए जाता था। शेष रात्रि उस ने यात्रा में व्यतीत की। जब प्रभात का तारा निकलने लगा, यह एक झाड़ी के नीचे सो रही। श्रम (थकान) से हाथ पांव थकित होगये थे। निद्रा देवी की गोद में उस का भय जाता रहा। और यह उस समय सचेत हुई जब सूर्य्य भगवान् अपनी सहस्र रश्मियों से इस संसार को ज्योतिमान कर रहे थे। कठिन घाम के लगने से शबरी की निद्रा जाती रही और वह अपनी धुन में फिर एक ओर को चल पड़ी।

उस काल में मतङ्ग ऋषि नामक एक बड़ा महात्मा वहां रहता था। जिसके पास बहुधा मनुष्य धर्म्म की प्यास बुझाने आया करते थे, उस का समय लोगों के सत्सङ्ग में व्यतीत होता था। शबरी ने विचारा मेरा कार्य्य भी यहीं ही सिद्ध होगा और उसने मार्ग के पथिकों से पूछा मतङ्ग जी का आश्रम कहां है? शबरी परमात्मा के प्रेम में निमग्न हो रही थी। जिन लोगों ने इसकी दशा देखी वह स्तम्भित रह गये और उस को ऋषि के आश्रम में ले गये। यहां वह चिरकाल तक ऋषि की शिक्षानुसार योगाभ्यास करती रही कुछ काल के अनन्तर उसने यथेष्ट उन्नति प्राप्त करली यहां तक कि उसकी पवित्रता और तपस्या का चर्चा दूर २ तक पहुंचा और लोग उस तपस्विनी के दर्शन के लिये आने लगे।

सती पृष्ठाग्त।

मतङ्ग ऋषि के मरने के पश्चात् शबरी उसी आश्र रही। रामचन्द्र जी सीता हरण के पश्चात् व्याकुलता के वन में विचरते हुए शबरी के आश्रम में पहुंचे। रामचन्द्र के शुभागमन से शबरी पहिले ही से अवगत थी, जिस दिन से राम ने चित्रकूट में पदार्पण किया था दिन से सारे ऋषियों और तपस्वियों को एक विशेष का हर्ष हो रहा था। क्योंकि उन्हें निश्चय था कि र बाण से दुष्ट राक्षसों का नाश होगा जो तपस्वियों के में विघ्न डालते थे।

जब शबरी ने राम का आगमन सुना, तो वह जंग फल फूल लाकर एकत्र करने लगी। राम यात्रा करते उस के सुन्दर आश्रम में आये, जिस के इर्द गिर्द सुन्दर लगे हुए थे। शबरी ने प्रेम और आदर सन्मान के सा का स्वागत किया और समय की सभ्यता के अनुसार और जल देकर बैठने के निमित्त आसन बिछा दिया, को उस सलिल स्वभाव वाली तपस्विनी की अवस्था दे बहुत आनन्द हुआ। दया भाव से पूछने लगे "तूने योग तप में उच्च-पद प्राप्त किया है, तेरे कार्य्य में कुछ विघ्न नहीं होता।"

शबरी ने कहा—महाराज आप के चरणों के दर्शन मनुष्यों के दुःख दूर भागते हैं, आपके दर्शन से मुझ परमानन्द हुआ, जिस समय आप चित्रकूट में आये थे,

गुरु सदा ईश्वर समान होते हैं। तीसरे ईश्वर की इ का सदैव वर्णन करके मग्न हो जाना। चौथे रात के ध्यान में मग्न रहने का यत्न करना। पांचवें सर्व-शक्तिमान जान कर उस में अटल विश्वास रखना वेदों का पढ़ना पढ़ाना। छटे शम, दम, शील और शुभ करना। सातवें सब को ईश्वर के यात्र वचे समझ कर से बचना और सन्तोष धारण करना। आठवें साधुओं मिलते रहना। क्योंकि साधुओं के मिलने से ईश्वर स्मरण होता रहता है। नावें छल कपट से पृथक रह सच्चाई को ग्रहण करना। इन में से यदि एक भी गु किसी में हो तो दूसरे आप ही आप उत्पन्न हो जाते हैं मनुष्य सहज में ईश्वर का भक्त बन जाता है। जो ऐसा क हैं उन का संसार में भी सभी आदर करते हैं। भामि तुझ में यह सब गुण हैं। अब तू यदि सीता का कुछ जानती है तो मुझ से वर्णन कर।

शबरी ने जो कुछ देखा सुना था, या मतङ्ग ऋषि ने कुछ उन को सुनाने की आज्ञा दी थी, सब कह सुनाया।

फिर वह सहर्ष बोली—आप पम्पापुर में जा कर य कीजिए उस के समीप सुग्रीव दुःख से व्याकुल हो ऋष्यमूक पर्वत पर रहता है। उस से मित्रता कीजिए आप का सब मनोरथ सिद्ध करेगा, और आप उस से मि कर बहुत प्रसन्न होंगे।

यह कह कर शबरी थोड़ी देर के लिए चुप होगई किन्तु
। जोड़ कर फिर कहने लगी—महाराज यह बन मतङ्ग
के नाम से प्रसिद्ध है। यहां ऋषि, मुनि रह कर तप
ते थे, आगे देखने से उनके हवन करने की वेदी प्रत्यक्ष
ाई दे रही है। मेरे गुरु सब के सब चल बसे, मैं केवल
प के देखने की अभिलाषा में जीती थी, अब इस शरीर के
ागने की इच्छा रखती हूं और जब राम ने उस की इच्छा
ीकार की शबरी ने प्राणायाम के पश्चात् समाधि की दशा
अपना प्राण त्याग दिया। रामचन्द्रजी ने स्वयं अपने
ाथों से उस पवित्र धर्मात्मा सती का मृतक संस्कार किया।

भारतवर्ष में पहिले ऐसी सच्ची देवियां हुआ करती थीं
जन को मृत्यु व आयु पर वश हुआ करता था। क्या अब
ी ऐसी दशा है? हमारी बेबशी, घृणित दशा स्वयं इस प्रश्न
का उत्तर है॥

३—सीता

॥ दोहा ॥

शूर को तो सिर नहीं, दाता के धन नाहिं।
पतिव्रता के तन नहीं, सुरत बसे पिव माहिं ॥१॥
दाता के धन घना, शूरे के सिर बीस।
पतिव्रता के तो तन सही, पति राखे जगदीश ॥२॥
आव* आंच सहना सुगम, सुगम खड्ग की धार।
नेह निवाहन एक रस, महा कठिन व्योहार ॥३॥
नेह निवाहे ही बने, सोचे बने न आन।
तन दे मन दे सीस दे, नेह न दीजे जान ॥४॥
लड़ने को सब ही चले, शस्त्र बांध अनेक।
साहब आगे आपने, जूझेगा कोई एक ॥५॥
शूर चला संग्राम में, कबहुं न देवे पीठ।
आगे चल पाछे फिरे, ताकि मुख नहीं दीठ ॥६॥
शूरा नाम धराय कर, अब क्यों डरपे वीर।
मर रहना मैदान में, सन्मुख सहना तीर ॥७॥
तीर तुपक से जो लड़े, सो तो वीर न होय।

ाया तज भक्ति करे, बीर कहावे सोय ॥८॥
संशय करूं न मैं डरूं, जब दुःख दिए निवार।
सहज सुन्न में घर किया, पाया नाम अधार ॥९॥
मेरा मुझ को कुछ नहीं, तेरा है सब साज।
तुझ को तेरा सौंपते, मेरा कौन अकाज ॥१०॥
जियों तुम्हारे नाम पर, जपूं तुम्हारा नाम।
मरूं तुम्हारे नाम पर, रहूं सदा निष्काम ॥११॥
(कबीर साहिब)

ीता! सीता! सीता! आहा क्या पाक व पवित्र नाम
ुनियां के सारे दफ्तर खंगाल आओ, प्रत्येक जाति का
ुत्य शिक्षार्थियों को अध्ययन कराओ, परन्तु सीता का
ाक और पवित्र जीवन तुम को कहीं न मिलेगा। आज
किसी कवि ने भी पवित्र सीता के से कल्पित पवित्र
न की छवि रचने का साहस नहीं किया। गत
त में ऐसी पवित्रता और धार्मिकता की छवि दृष्टिगत नहीं
और न वर्तमान समय में कहीं दृष्टिगोचर होती है और
ाचित् आगामी काल में भी दृष्टिगोचर न होगी। सीता
ः बार उत्पन्न हुई, फिर संसार को ऐसी सुन्दर, पवित्र
र्मिका देवी के दर्शन प्राप्त नहीं हुए। हम में राम कई एक
र परन्तु सीता एक ही हुई है। सीता अपने दृष्टान्त से
स्त्रियों को कैसा होना चाहिए।

धार्मिक स्त्री का पूर्ण आदर्श न उस नेक सती के
जीवन के इर्द गिर्द परिक्रमा करते हैं। हजारों लाखों
बीत गए। सीता जहां जिस स्थान पर खड़ी थी,
खड़ी हुई है। और आर्य्यवर्त के स्त्री पुरुष, लड़के,
युवा, वृद्ध उस पवित्र पतिव्रता देवी की उसी गहरी
और सन्मान के साथ पूजा करते हैं। किसी जाति
नहीं किया होगा, जितना हम इस माता के सन्मान का
रखते हैं। भारत के इस सिरे से उस सिरे तक
आओ सीता का नाम प्रत्येक द्वार व भींति से गूंजता
जान होगा।

सीता जहां खड़ी थी वहां अब तक खड़ी है
की प्रसिद्धता, उस की पवित्रता, और उस के
में किञ्चित् कमी नहीं आई। और हम को विश्वास
वह सदैव वहां ही विराजमान रहेगी। तेज और धर्म
पतिव्रता की अद्वितीय आदर्श। उस ने क्या २
कैसी २ कठोरता के साथ उस की परीक्षा की गई।
का मूसलधार पानी उस के सिर से गुजर गया,
कभी भूल कर भी दुःख का प्रकाश नहीं किया। पति को
और पति की भक्ति को सब से श्रेष्ठ समझा वह स
पतिव्रता धर्म्म की आदर्श है। राजा रानी सब उस के
की धूलि को सिर पर चढ़ाते हैं। और ऋषि, महर्षि,

र साधारण मनुष्य सब उस को सच्चे हृदय और सच्चे प्रेम
पूजते रहेंगे। हम में से बच्चा २ जानता है सीता कौन थी
सी को इस नाम के बताने और इस के समाचार सुनाने
आवश्यकता नहीं है। सम्भव है संस्कृत का साहित्य
मय के उलट पुलट से विलुप्त होजाय, सम्भव है हमारा
तीय इतिहास वर्त्तमान बेवशी की अवस्था में नष्ट कर
या जाय सम्भव है पौराण व महाभारत की घटनायें हम
लादें, परन्तु स्मरण रहे, कि जब तक पृथिवी के ऊपर पाञ्च
हिन्दू भी जीते रहेंगे, कि चाहे वह सभ्यता व भद्रतादि से
चित रहे, चाहे अपनी गवार भाषा के सिवाय और कुछ
जानते हों किन्तु सीता की कथा सदैव उन की जिह्वा पर
हेगी। सीता का नाम हमारी नस २ में व्याप्त है। वह हमारे
अङ्ग में रुधिर बन कर दौड़ता है। हम सब स्त्री, पुरुष लड़के
वाले, सीता की सन्तान हैं हम कभी सीता का नाम भूल
नहीं सकते। पुरुष इस का नाम लेते ही सम्मान भावसे शिर
झुकाएंगे और स्त्रियां उसी मार्ग पर चलेंगी, जो मार्ग सीता
उनके लिए अपने दृष्टान्तसे बता गई है। और वही सचमुच
सच्चा मार्ग है।

आज हम उस सती का जीवन चरित्र आप को संक्षेप
के साथ सुनाते हैं। सीता राजा जनक मथुला नरेश की
लड़की थी, उसका पालन अनुसूया नामिका जनक की पट-
रानी की गोद में हुआ था सीता अत्यन्त सुन्दर थी, मनोहर

भोली भाली चेहरे से सरलता बरसती थी स्वभाव की अच्छी थी, कि रणवास की उदासीन स्वभाव वाली उस की सङ्गति में अपनी उदासीनता भूल जाया करती। इस के अधर की मुस्कान से देखने वाले के दुःख दूर जाते थे।

जनक इस कन्या को प्राणसे अधिक प्यार करते थे। उस की रानियों को भी वह इतनी प्यारी थी, कि सब आंखों की तारा बनी हुई थी, सीता को बड़े लाड़ और से पालना की गई। और वह दिनों दिन सुन्दरता और शी में चन्द्रमा की तरह बढ़ने लगी।

एक अवसर पर परशुराम यमदग्नि ऋषि का बेटा। हि लापुर में आए परशुराम जी क्षत्रियों के प्रसिद्ध शत्रु थे। वह जनक पर विशेष प्रेम कृपा करते थे। जनक जहां न शील और प्रजा वत्सल राजा था, वहां आत्म विद्या में ज्ञानी और महान समझा जाता था, ऋषि मुनि तक उस पास शिक्षा पाने अध्यात्मिक तत्वों के अर्थ जानने के आया करते थे, जनक के विषय में लोगों का मत था कि जीवन मुक्त थे, इस लिए वह विदेह कहलाते थे राजा ऋषि का उस काल के नियमानुसार स्वागत किया और को आसन पर बैठाया।

जब परशुराम और जनक एकत्र बैठे हुए बातचीत रहे थे, सीता का भी उधर से गुज़र हुआ, कभी इस

इस मनोरथ से वञ्चित होकर वापस गये। वेयश होकर ने सीता के स्वयम्वर की इच्छा की। इस स्वयम्वर मारीच, सुवाहु आदि उस काल के बड़े २ योधा और आए, परन्तु धनुष को अजय समझ कर वापस चले संयोग से राम और लक्ष्मण अयोध्या के राजकुमार भी गुरु विश्वामित्र जी के साथ इस विचित्र धनुष के लिए आये थे। जनक अपने मन्त्री सतानन्द को लेकर से मिला और उन का आदर और सत्कार किया जब राम और विश्वामित्र को स्वागत कर रहे थे।

विश्वामित्र ने उन को सम्बोधन करके कहा—राज यह दोनों राजकुमार दशरथ अयोध्या नरेश के लड़के हैं, का नाम राम व लक्ष्मण है, यह तुम्हारे पूर्वजों का वि धनुष देखने की इच्छा से आये हैं, उचित है कि यह इन दिखा दो, जनक ने स्वीकार किया।

दूसरे दिन राम अपने भाई लक्ष्मण को साथ लिये उस जगह आये, जहां धनुष रखा हुआ था, उन्होंने उस सहज में उठा लिया और जय गुण चढ़ाने लगे तो बीच से टूट गया उस के टूटने के शब्द से द्वार व भीति उठे। सब आचार्य से राम की अल्पायु और उन के विक्रम को देख कर मुग्ध हुए क्योंकि यह वही धनुष जिस को प्रथम रावण सा बली तीन बार उठा कर हार

इस मनोरथ से वञ्चित होकर वापस गये। बेबश होकर जनक ने सीता के स्वयम्वर की इच्छा की। इस स्वयम्वर में रावण, मारीच, सुबाहु आदि उस काल के बड़े २ योधा और शूरमा आए, परन्तु धनुष को अजय समझ कर वापस चले गये। संयोग से राम और लक्ष्मण अयोध्या के राजकुमार भी अपने गुरु विश्वामित्र जी के साथ इस विचित्र धनुष के देखने के लिए आये थे। जनक अपने मन्त्री सतानन्द को लेकर ऋषि से मिला और उन का आदर और सत्कार किया जब जनक राम और विश्वामित्र को स्वागत कर रहे थे।

विश्वामित्र ने उन को सम्बोधन करके कहा—राजन्! यह दोनों राजकुमार दशरथ अयोध्या नरेश के लड़के हैं, इन का नाम राम व लक्ष्मण है, यह तुम्हारे पूर्वजों का विचित्र धनुष देखने की इच्छा से आये हैं, उचित है कि वह इन को दिखा दो, जनक ने स्वीकार किया।

दूसरे दिन राम अपने भाई लक्ष्मण को साथ लिये हुए उस जगह आये, जहां धनुष रखा हुआ था, उन्होंने उस को सहज में उठा लिया और जब गुण चढ़ाने लगे तो धनुष बीच से टूट गया उस के टूटने के शब्द से द्वार व भीति गूंज उठे। सब आचार्य से राम की अल्पायु और उन के बल विक्रम को देख कर मुग्ध हुए क्योंकि यह वही धनुष था, जिस को प्रथम रावण सा बली तीन बार उठा कर हार गए

इस मनोरथ से वञ्चित होकर वापस गये। बेवश होकर जनक ने सीता के स्वयम्वर की इच्छा की। इस स्वयम्वर में रावण, मारीच, सुबाहु आदि उस काल के बड़े २ योधा और सूरमा आए, परन्तु धनुष को अजय समझ कर वापस चले गये। संयोग से राम और लक्ष्मण अयोध्या के राजकुमार भी अपने गुरु विश्वामित्र जी के साथ इस विचित्र धनुष के देखने के लिए आये थे। जनक अपने मन्त्री सतानन्द को लेकर ऋषि से मिला और उन का आदर और सत्कार किया अब जनक राम और विश्वामित्र को स्वागत कर रहे थे।

विश्वामित्र ने उन को सम्बोधन करके कहा—राजन्! यह दोनों राजकुमार दशरथ अयोध्या नरेश के लड़के हैं, इन का नाम राम व लक्ष्मण है, यह तुम्हारे पूर्वजों का विचित्र धनुष देखने की इच्छा से आये हैं, उचित है कि वह इन को दिखा दो, जनक ने स्वीकार किया।

दूसरे दिन राम अपने भाई लक्ष्मण को साथ लिये हुए उस जगह आये, जहां धनुष रखा हुआ था, उन्होंने उस को सहज में उठा लिया और जब गुण चढ़ाने लगे तो ६ बीच से टूट गया उस के टूटने के शब्द से द्वार व भीति उठे। सब आचार्य से राम की अल्पायु और उन के विक्रम को देख कर ..
जिस को प्रथम ..

इस मनोरथ से वञ्चित होकर वापस गये। बेवश होकर जनक ने सीता के स्वयम्वर की इच्छा की। इस स्वयम्वर में रावण मारीच, सुबाहु आदि उस काल के बड़े २ योधा और प्रतापी आए, परन्तु धनुष को अजय समझ कर वापस चले गये संयोग से राम और लक्ष्मण अयोध्या के राजकुमार भी अपने गुरु विश्वामित्र जी के साथ इस विचित्र धनुष के देखने के लिए आये थे। जनक अपने मन्त्री सतानन्द को लेकर ऋषि से मिला और उन का आदर और सत्कार किया जब जनक राम और विश्वामित्र को स्वागत कर रहे थे।

विश्वामित्र ने उन को सम्बोधन करके कहा—राजन् यह दोनों राजकुमार दशरथ अयोध्या नरेश के लड़के हैं, इन का नाम राम व लक्ष्मण है, यह तुम्हारे पूर्वजों का विचित्र धनुष देखने की इच्छा से आये हैं, उचित है कि यह इन को दिखा दो, जनक ने स्वीकार किया।

दूसरे दिन राम अपने भाई लक्ष्मण को उस जगह आये, जहां धनुष रखा हुआ था सहज में उठा लिया और जब गुण खींच से टूट गया उस के टूटने के शब्द उठे। सब आचार्य से राम की अल्पा विक्रम को देख कर मुग्ध हुए क्यों। जिस को प्रथम रावण सा बली तीन

प्रजा को विदित हो गया था, कि रामचन्द्र अब नहीं। अब युवराज होंगे और कल उनके राजतिलक का दिन है।

राजा ने सारा सामान जो देने अवसरों के लिए आव-श्यक है तय्यार कराया, यह भी हृदय में खुश था, कि वंश का फल राजतिलक होगा, कौशल्या ने ब्राह्मणों को बहुत कुछ दान दिया, लक्ष्मण के आनन्द की सीमा नहीं थी। केवल भरत और शत्रुघ्न घर पर नहीं थे। वह अपने नाना के यहाँ गए हुए थे।

दुनियां एक ऐसी जगह है, जहां किसी बात का ठिकाना नहीं, एक नीच दुष्ट दासी ने केकई भरत की माता के कान भरने आरम्भ किये, उस का हृदय क्रमशः राम के विरुद्ध होता गया, और उस ने दशरथ की इच्छा को मिटाने की ठान ली।

रात को दशरथ महल में आया, केकई रोती सिसकती हुई एक ओर पड़ी थी। दशरथ इस रानी को सब से अधिक प्यार करता था, रहा सहा उस का दिल भर आया "कुशल तो है आज तूने क्या दशा बनाई है?"।

केकई ने उत्तर दिया—आप को मेरा कुछ भी ध्यान नहीं यहां तक कि अपने वचन भी भूल गए।

सरल स्वभाव दशरथ क्या जानता था, कि क्या होने वाला है। उस ने कहा—अहा! स्मरण हुआ, मैंने तुझ से दो प्रतिज्ञाएं की थीं, तूने उन के स्मरण कराने के लिए यह दशा

के सुख नाम को नहीं मिलता। इस लिए तुम धैर्य्य से अयोध्या में रह कर मेरी प्रतीक्षा करो"। परन्तु सीता जो धर्म से अवगत थी हाथ बांध कर कहने लगी॥

खग मृग परिजन नगर वन,
वलकल बसन दुकूल।
नाथ साथ सुर सदन सम,
पर्णशाला सुख मूल॥

राम ने अनेक भांति से समझाया, वन के दुःख का चित्र खींच कर दिखाया, परन्तु सीता ने फिर उसी प्रकार नम्रता से विनती की। हे नाथ! स्त्री अपने पति की अर्धाङ्गी है, यदि पति दुःखी है तो उस को भी दुःख उठाना चाहिए, मैं सती और पार्वती की तरह तुम्हारे साथ रहूंगी जीते जी तुम्हारे चरणों से पृथक होना स्वीकार नहीं है अस्तु राम ने सीता को अपने साथ लिया और पिता से विदा होने के लिए केकई महारानी के महल में आए, केकई राह देख रही थी, प्रथम इस के कि वह कुछ और कहे, उस ने साधुओं के तीन जोड़े राम के पास लाकर रख दिए, राम लक्ष्मण दोनों ने राजसी वस्त्र उतार कर उन को पहन लिया। सीता बेवशी की दृष्टि से राम की ओर देखने लगी, वशिष्ठ इस अवसर पर वर्तमान थे। उन्हों ने केकई को सम्बोधन करके कहा— यह क्या अत्याचार है, तूने केवल राम के वास्ते वनवास

के सुख नाम को नहीं मिलता। इस लिए तुम धैर्य से
ध्या में रह कर मेरी प्रतीक्षा करो"। परन्तु सीता
धर्म से अवगत थी हाथ बांध कर कहने लगी॥

खग मृग परिजन नगर वन,
वलकल वसन दुकूल।
नाथ साथ सुर सदन सम,
पर्णशाला सुख मूल॥

राम ने अनेक भांति से समझाया, वन के दुः
चित्र खींच कर दिखाया, परन्तु सीता ने फिर उसी
नम्रता से विनती की। हे नाथ! स्त्री अपने पति की छ
है, यदि पति दुःखी है तो उस को भी दुःख उठाना च
मैं सती और पार्वती की तरह तुम्हारे साथ रहूंगी जो
तुम्हारे चरणों से पृथक होना स्वीकार नहीं है अस्तु
ने सीता को अपने साथ लिया और पिता से विदा हो
लिए केकई महारानी के महल में आए, केकई राह देख
थी, प्रथम इस के कि वह कुछ और कहे, उस ने साधुओं
तीन जोड़े राम के पास लाकर रख दिए, राम लक्ष्मण दो
ने राजसी वस्त्र उतार कर उन को पहन लिया। सीता वेव
की दृष्टि से राम की ओ लगी, वशिष्ट इस अवस
पर प थे। उन्हों ने सम्बोध ा-
यह,

सीता ने उत्तर दिया—तू अपनी बड़ाई नाहक जिताता है यदि तुझ में बल होता तो राम की अवर्त्तमानता में मुझे चोर के समान न लाता, तेरा भी वही हाल उन के हाथों से होता जो जन स्थान के चौदह सहस्र राक्षसों का हुआ, एक भी उन में से जीता न बचा। कुशल इसी में है, कि तू मुझे को राम के पास पहुंचा दे। अन्यच राघव तुझ समेत तेरे कुल का नाश कर देंगे और इस प्रकार की नीच वार्ता मेरे सन्मुख कदापि न करना।

रावण सीता की वार्तों पर बहुत क्रोधित हुआ और डरा धमका कर चला गया, सीता चुपचाप मौनता की देवी बनी हुई रोती रही, बहुत सी राक्षस स्त्रियों ने भी सीता को समझाया, परन्तु जब किसी का वश न चला, तो रावण ने क्रोधित होकर अशोक वन में उस को बन्दी किया भयङ्कर राक्षसी पहरे पर नियत की गई। वह इस को भान्ति २ के कष्ट देती रहीं, परन्तु सती ने कभी अपना सिर ऊपर न उठाया, न किसी की बात का उत्तर दिया। राक्षस स्त्रियां कभी खड्ग दिखा कर इस को डराती थीं, लाभ धोखे से खाना चाहती थीं। किन्तु सीता ने ऐसा मौन साधा कि किसी की ओर ध्यान न दिया और बड़े धैर्य के साथ कैद के दुःखों को सहन करने लगी।

राम जिस समय मृग को मार कर लौट आए, सीता

सीता ने उत्तर दिया—तू अपनी बड़ाई नाहक़ क्ति
है यदि तुझ में बल होता तो राम की अवर्त्तमानता में मु
चोर के समान न लाता, तेरा भी वही हाल उन के हा
होता जो जन स्थान के चौदह सहस्र राक्षसों का हुआ,
भी उन में से जीता न बचा। कुशल इसी में है, कि तू
को राम के पास पहुंचा दे। अन्यच राघव तुझ समे
कुल का नाश कर देंगे और इस प्रकार की नीच बातं
सन्मुख कदापि न करना।

रावण सीता की बातों पर बहुत क्रोधित हुआ
डरा धमका कर चला गया, सीता चुपचाप मौनता की
बनी हुई रोती रही, बहुत सी राक्षस स्त्रियों ने भी सीत
समझाया, परन्तु जब किसी का वश न चला, तो राव
क्रोधित होकर अशोक वन में उस को बन्दी किया भय
राक्षसी पहरे पर नियत की गई। वह इस को भान्ति २
कष्ट देती रहीं, परन्तु सती ने कभी अपना सिर ऊपर
उठाया, न किसी की बात का उत्तर दिया। राक्षस रि
कभी खड्ग दिखा कर इस को डराती थीं, लाभ धोखे
खाना चाहती थीं। किन्तु सीता ने ऐसा मौन साधा
किसी की ओर ध्यान न दिया और बड़े धैर्य के साथ
के दुःखों को सहन करने लगी।

राम जिस समय मृग को मार कर लौट आए, सीर

राम को सीता हृदय से प्यारी थी, परन्तु उस समय की प्रथा के अनुसार उन की पवित्रता की परीक्षा लेना आवश्यक था, इस लिए जब राम ने क्रोध की दृष्टि से सीता को देखा तो वह विचारी दुःख से कांप उठी। अस्तु जब लङ्का की सारी स्त्रियों और देवताओं ने आकर साक्षी दी और सौगन्ध खाकर उस की पवित्रता का प्रकाश किया, तब राम ने सीता को साथ लिया। और १४ वर्ष के पश्चात् अयोध्या लौट आए और राज करने लगे।

एक दिन इठात जब सीता जी गर्भवती थीं, जो रामचन्द्र उस से कहने लगे—ऐसे समय में स्त्रियों को विविध प्रकार की रुचियां होती हैं, यदि तुझ को किसी बात की इच्छा हो तो कह दे।

सीता ने उत्तर दिया—महाराज! मैं कुछ नहीं चाहती यदि आप दो दिन की आज्ञा दें तो मैं बन जाकर तपस्वी स्त्रियों से मिल आऊं। इस के सिवाय मुझे और किसी बात की इच्छा नहीं है।

राम ने कहा—एवमस्तु।

विधिवश जब राम सीता से बात करके दरबार में आए दर्बारियों ने तरह २ के समाचार सुनाए।

राम ने भद्र नामक मन्त्री से पूछा—यह सब सत्य है, किन्तु यह तो बता, लोग मेरे अथवा सीता या केकई, भरत लक्ष्मण के विषय में क्या कहते हैं?

यह राजा की आज्ञा है कल जाकर तुम सीता को बन में
छोड़ आओ उस ने स्वयम् ऐसी इच्छा प्रगट भी की प्रात
काल जब लक्ष्मण ने रथ तय्यार किया। सीता ने खुशी से बहु
से कपड़े और आभूषणों को बकुचे (गट्ठर) बन्धवाए बे
गरीब क्या जानती थी कि शिर पर आफत आने वाली है।
लक्ष्मण इस को रथ पर बैठा कर अयोध्या से चल पड़े
पांच का मार्ग समाप्त करके गङ्गा पार होने के निमित्त नौ
पर बैठे, सीता को वस्त्र और आभूषण सम्भालते देख क
उस की निरपराधता और सरलता ने लक्ष्मण के हृदय प
गहरा प्रभाव डाला और उन के नेत्रों से आंसू बहने लगे

सीता ने लक्ष्मण को रोता देख कर कहा—सुमित्रान
तुम क्यों रोते हो? क्या राम तुम ही को प्यारे हैं, क्या मैं
उन को प्यार नहीं करती केवल दो दिन की बात है वन
में ऋषियों की स्त्रियों को यह वस्त्र और आभूषण वित
रण करके हम तुम लौट आयेंगे, और फिर राम के चरणों
से पृथक नहीं होंगे, लक्ष्मण चुप थे कुछ उत्तर नहीं बन
आया।

अब गङ्गा पार करके चित्रकूट के निकट वाल्मीक
ऋषि के आश्रम के पास आए लक्ष्मण चुप थे फिर रुक न
सका और वह फूट २ कर रोने लगे। सीता ने व्याकुल हो
कर कहा—पुत्र! तुम रोते क्यों दुःखी हो। राम पर कोई
विपद तो नहीं आई। हमारी माताऐं कौशल्या, सुमित्रा,

समीप ही वाल्मीकि ऋषि का आश्रम था, शिष्यों ने आश्र
उस से कहा—भगवान् ! किसी भद्रजन की स्त्री आश्रम
समीप ही रो रही है, हम ने ऐसी सुन्दर स्त्री आज तक नह
देखी वह आप की कृपा की पात्र है।

यह सुन कर ऋषि उसी क्षण वहां चला आया और
अर्घ दे कर कहने लगा—पुत्री ! यह आश्रम आज से तेरा घर
है, मैं जानता हूं तू राम की सती साध्वी राणी है; राम ने
केवल प्रजा के अपवाद से तुझे त्याग किया है, अन्यथा वह
जानते हैं तू सती है। यह भाग्य की बात है, इस में किसी
का वश नहीं तू चल आश्रम की स्त्रियां तेरी सेवा करेंगी और
तुम्हारे समीप रह कर अपना जीवन व्यतीत कर सकेंगी।

दुखित सीता वाल्मीकि के साथ आश्रम में आई। इस
की सरलता, इस के स्वभाव, इस के आचरण सब श्रेष्ठ थे
ऋषियों की धर्मपत्नियां इस को जान से अधिक प्रिय सम
झती थीं। वह सब कुछ था, पर सीता अपने हृदय में बहुत
दुःखी रहती थी, उस दिन से फिर उस के अधरामृत पर
मुस्कराहट नहीं देखी गई, परन्तु इसने न कभी राम को दोष
दिया और न अपने भाग्य को दोष लगाया।

कई मास बीतने के पश्चात् उस के गर्भ से दो बालक
जौड़े पैदा हुए जिन का नाम ऋषि ने * लव और कुश रखा

* इस की व्याख्या के लिए देखो रामायण उत्तर काण्ड इसी
पुस्तककार रचित।

क्या करेंगे, यह हमारे किसी काम की नहीं, जिन का अन्न फल फूल और जिन के वस्त्र वृक्षों की छाल है वह धन ले क्या करेंगे? सरल ऋषि पुत्रों के मुख से यह शब्द निकल न पाए थे कि सब उपस्थित जन राम और उन के मुख देखने लगे। क्योंकि उन्हीं की भान्त उन का रूप था।

राम ने उसी समय सभा समाप्त की और जब उन को ज्ञात हुआ कि (लव कुश) उन के पुत्र हैं और सीता अब तक वन में जीवित है तो उन्होंने ऋषि को कहला भेजा कि सीता को इस सभा में आकर अपनी पवित्रता का प्रमाण देना चाहिए।

ऋषि ने उत्तर दिया—"एवमस्तु"।

यह बात सब पर विदित हो गई कि दूसरे दिन सीता की पवित्रता की परीक्षा होगी। सारी सृष्टि उमड़ आई राक्षस, वानर, रीछ, गन्धर्व, नाग प्रत्येक जाति के जन वहां एकत्र हुए।

दूसरे दिन जब नियत समय आ पहुंचा, वाल्मीकि सीता को साथ लिए हुए आए। सीता की दृष्टि धरती की ओर थी, आंसू बह रहे थे, देखने वाले भी अपने हृदय को थांम न सके, सब के नेत्रों से आंसू बहने लगे और स्पष्ट शब्दों में सीता की पवित्रता की प्रशंसा और प्रजा के मिथ्या अभियोग की निन्दा करने लगे सभा में एक खलबली सी मच गई।

क्या करेंगे, यह हमारे किसी काम की नहीं, जिन का फल फूल और जिन के वस्त्र वृक्षों की छाल है वह धन क्या करेंगे ? सरल ऋषि पुत्रों के मुख से यह शब्द निक न पाए थे कि सब उपस्थित जन राम और उन के मुख देखने लगे । क्योंकि उन्हीं की भान्त उन का रूप था !

राम ने उसी समय सभा समाप्त की और जब उ ज्ञात हुआ कि (लव कुश) उन के पुत्र हैं और सीत तक धन में जीवित है तो उन्होंने ऋषि को कहला भे सीता को इस सभा में आकर अपनी पवित्रता का देना चाहिए।

ऋषि ने उत्तर दिया—"एवमस्तु"।

यह बात सब पर विदित हो गई कि दूसरे दिन की पवित्रता की परीक्षा होगी । सारी सृष्टि उमड़ राक्षस, वानर, रीछ, गन्धर्व, नाग प्रत्येक जाति के ज एकत्र हुए ।

दूसरे दिन जब नियत समय सीता को साथ लिए हुए आए। ओर थी, आंसू वह रहे थे, थाम न सके, सब के नेत्रों शब्दों में सीता की पवित्रता

राम की वक्तृता अभी समाप्त नहीं हुई थी कि लाल वस्त्र पहिरे हुए सीता कर जोड़ कर सभा के सन्मुख आई गर्दन झुकी, दृष्टि पृथ्वी की ओर थी उस ने सब को सुना कर कहा—प्रभु ! यदि मैंने सिवाय राम के किसी और का ध्यान किया हो। यदि मैं धर्म पर सदा आरूढ़ रही हूं तो हे पृथ्वी माता ! तू मुझे इसी समय अपनी गोद में स्थान दे। और उसी समय तड़ाक का शब्द सुनाई दिया, सीता पृथ्वी की गोद में समा गई, देखने वाले दंग रह गए, महा कुलाहल मच गया। सब कहने लगे पृथ्वी से उत्पन्न हुई, पृथ्वी में जा मिली।

यह वास्तव में पृथ्वी की सच्ची पुत्री थी, क्योंकि उस में पृथ्वी की सी धैर्य्य और गम्भीरता की शक्ति वर्तमान थी और इस घटना के पश्चात् सब लोग उस की पवित्रता की प्रशंसा करने लगे, आगे क्या हुआ हमारे कथन से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

सीता मर[illegible] को मरे [illegible] सहस्रों वर्ष हो गये, परन्तु [illegible] [illegible]न की

राम की वक्तृता अभी समाप्त नहीं हुई थी कि लाल वस्त्र पहिरे हुए सीता कर जोड़ कर सभा के सन्मुख आई गर्दन झुकी, दृष्टि पृथ्वी की ओर थी उस ने सब को सुना कर कहा—प्रभु ! यदि मैंने सिवाय राम के किसी और का ध्यान किया हो। यदि मैं धर्म पर सदा आरूढ़ रही हूं तो हे पृथ्वी माता ! तू मुझे इसी समय अपनी गोद में स्थान दे। और उसी समय तड़ाके का शब्द सुनाई दिया, सीता पृथ्वी की गोद में समा गई, देखने वाले दंग रह गए, महा कुलाहल मच गया। सब कहने लगे पृथ्वी से उत्पन्न हुई, पृथ्वी में आ मिली।

यह वास्तव में पृथ्वी की सच्ची पुत्री थी, क्योंकि उस में पृथ्वी की सी धैर्य्य और गम्भीरता की शक्ति वर्तमान थी और इस घटना के पश्चात् सब लोग उस की पवित्रता की प्रशंसा करने लगे. आगे क्या हुआ हमारे कथन से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

सीता मर गई, उस को मरे हुए लाखों सहस्रों वर्ष हो गये, परन्तु हिन्दुओं से पूछो वह मरी है या जीवित है, उन की मातृ भक्ति का जोश उमण्ड कर उत्तर देगा, वह सदा अमर है, वह हमारी जातीय देवी है। हम उस के नाम में सदा कल्याण व शुभ परिचय पायेंगे।

राम की यह कल्पना अभी समाप्त नहीं हुई थी कि लाल वस्त्र पहिरे हुए सीता कर जोड़ कर सभा के सन्मुख आई गर्दन झुकी, दृष्टि पृथ्वी की ओर थी उस ने सब को सुना कर कहा—प्रभु ! यदि मैंने सिवाय राम के किसी और का ध्यान किया हो। यदि मैं धर्म पर सदा आरूढ़ रही हूं तो हे पृथ्वी माता ! तू मुझे इसी समय अपनी गोद में स्थान दे। और उसी समय तड़ाके का शब्द सुनाई दिया, सीता पृथ्वी की गोद में समा गई, देखने वाले दंग रह गए, महा कुलाहल मच गया। सब कहने लगे पृथ्वी से उत्पन्न हुई, पृथ्वी में आ मिली।

यह वास्तव में पृथ्वी की सच्ची पुत्री थी, क्योंकि उस में पृथ्वी की सी धैर्य्य और गम्भीरता की शक्ति वर्तमान थी और इस घटना के पश्चात् सब लोग उस की पवित्रता की प्रशंसा करने लगे, आगे क्या हुआ हमारे कथन से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

सीता मर गई, उस को मरे हुए लाखों सहस्रों वर्ष हो गये, परन्तु हिन्दुओं से पूछो वह मरी है या जीवित है, उन की मातृ भक्ति का जोश उमण्ड कर उत्तर देगा, वह सदा अमर है, यह हमारी जातीय देवी है। हम उस के नाम में ... कल्याण व शुभ परिचय पायेंगे।

राम की वक्तृता अभी समाप्त नहीं हुई थी कि का वस्त्र पहिने हुए सीता कर जोड़ कर सभा के सम्मुख आ नयन झुका, दृष्टि पृथ्वी की ओर थी उस ने सब को सुन कर कहा—प्रभु ! यदि मैंने सिवाय राम के किसी और का ध्यान किया हो। यदि मैं धर्म पर सदा आरूढ़ रही हूं तो हे पृथ्वी माता ! तू मुझे इसी समय अपनी गोद में स्थान दे और उसी समय तड़ाके का शब्द सुनाई दिया, सीता पृथ्वी की गोद में समा गई, देखने वाले दंग रह गए, महा कुलाहल मच गया। सब कहने लगे पृथ्वी से उत्पन्न हुई, पृथ्वी में आ मिली।

यह वास्तव में पृथ्वी की सच्ची पुत्री थी, क्योंकि उस में पृथ्वी की सी धैर्य्य और गम्भीरता की शक्ति वर्तमान थी और इस घटना के पश्चात् सब लोग उस की पवित्रता की प्रशंसा करने लगे, आगे क्या हुआ हमारे कथन से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

सीता मर गई, उस को मरे हुए लाखों सहस्रों वर्ष हो गये, परन्तु हिन्दुओं से पूछो वह मरी है या जीवित है, उन की मातृ भक्ति का जोश उमण्ड कर उत्तर देगा, वह सदा अमर है, यह हमारी जातीय देवी है। हम उस के नाम में सदा कल्याण व शुभ परिचय पायेंगे।

राजा स्वभाव का बहुत उत्तम और धर्मात्मा था औ
सच्छात्रों से विघ्न होने के कारण, वह अपना समय आध्या
त्मिक बातों में व्यय करता था, उस की बुद्धि भी तीव्र थी
और इस लिये राज काज में व्यस्त रहते हुए भी वह अप
आप को पूर्णतः सांसारिकता का दास नहीं बनाना चाहत
था, उस के सन्मुख मनुष्य जीवन का असल उद्देश्य सद
विराजमान रहता था और वह संसार के काम काज में र
कर भी अपने आप को उस से पृथक रखने का उद्योग करत
था वह चाहता था कि सदा अपने स्वरूप में स्थिर रहे औ
परमात्मा का रूप कभी उससे पृथक न हो। परन्तु यह इ
प्रकार का विषय है, कि मनुष्य जब तक धैर्य और गम्भीरत
और बुद्धि से काम न ले, कृतकार्यता प्राप्त नहीं होती, अधी
और चञ्चल को आध्यात्मिक भेद या आत्मिक विषय
समझने का अवसर कम प्राप्त होता है।

किसी बात का सुन लेना और फिर उसको अप
जीवन का अंग बना लेना दो भिन्न विषय हैं, सुनने औ
करने में आकाश पाताल का अन्तर है। लोग नित्य व्याख्या
सुनते हैं, पुस्तकें भी पढ़ते हैं और जब वक्तृता का अवस
मिलता है तो आकाश पाताल के कलावे मिला दिये हैं ईश्व
और जीवादि के सिद्धान्त की व्याख्या इस उत्तमता से कर
हैं, कि मानों उन पर पूरा २ उनका आचरण है, किन
वास्तविक यह है, उनको समझ बूझ कुछ भी नहीं

उस को कठिन धक्का लगा और उसको ज्ञान हो गया, कि जब तक मनुष्य किसी विषय को स्वयं अपने तौर पर सिद्ध न करले उस पर वक्तृता करने का अधिकार नहीं है। उस ने सोचा आत्मा का अनुभव बिना वैराग्य और अभ्यास के नहीं होगा, उत्तम है मैं राज काज के काम को छोड़ कर वन में चलकर योगाभ्यास करूं यह जीवन क्षणभंगुर है। अस्तु राजाओं को एक दिन राजपाट छोड़ना पड़ता है, इस लिये मैं अभी से क्यों न इसे परित्याग कर दूं, और जीवन मुक्त होने का आनन्द प्राप्त करूं।

इस राजा की रानी बड़ी धर्मात्मा थी और वह इन बातों को राजा से अधिक अच्छा समझती थी, जब उसको ज्ञात हुआ कि राजा ने बन जाने की इच्छा की है। उस ने उस को ऊंच, नीच, अच्छी स्त्रियों की भान्ति समझाया, परन्तु राजा के जी में कुछ असर न हुआ। साथ रहने, प्रति दिन व्यवहार करने और अपने आधीन समझने के कारण न तो रानी अधिक बात कर सकी, और न राजा ने उस की बात पर ध्यान दिया, वह संसार से उदासीन था और संसार की ओर से घृणा उत्पन्न हो चुकी थी और राज और घर गृहस्थ दुःख मय दिखाई देते थे, उस ने रानी की बात काट कर कहा—मुझे महा वैराग्य हुआ है मैं अब कदापि घर में न रहूंगा और कोई शक्ति मुझ को अपनी

राजा लौट कर अपने राज को हाथ में लेगा, जब तक वह यहां नहीं है तुम उस के नाम से राज करो और राजा के खोज में चारों ओर मनुष्य रवाना किए। किन्तु उस का पता न लगा, रानी के कुछ निज जन भी खोजते फिरते थे उन को उस का पता मिल गया, उन्होंने रानी के पास आकर खबर की, अस्तु राणी ने मन्त्रियों को बुलाकर कहा—कि तुम में से कोई राजा को वापस न ला सकेगा, इस लिये मैं स्वयं राजा को वापस लाने के लिए जाती हूं तुम ने पीछे सब बातों का अच्छी तरह ध्यान रखना उन्होंने स्वीकार किया. रानी ने अपने राजसी वस्त्र आभूषण उतार दिए और ऋषियों की भान्त जटा बना साधु भेष में उसी स्थान पर पहुंची जहां मान्धाता अपने ध्यान में मग्न हो रहा था।

राजा ने दूर से देखा कि कोई ऋषि पुत्र उस के पास आ रहा है। उस को बड़ा आनन्द हुआ, क्योंकि जब से उस ने राजधानी छोड़ी थी मनुष्य से बात चीत करने का अवसर न मिला था मनुष्य स्वभावतः समाज पसन्द बनाया गया है, यद्यपि साधन व्रत आदि में वह अकेले भी दिन काट सकता है, किन्तु सिवाय विशेष अवस्थाओं के साधारणता अकेले रहना रुचि कर नहीं। इसने समझा। चलो अच्छा है, इस के सत्सङ्ग से लाभ होगा।

कबीर संगत साध की, हरे और की व्याध।
संगत बुरी असाध की, आठों पहर उपाध॥

रानी ने कहा—आप का विचार बहुत उत्तम है, आप के आने से वन की शोभा हुई, परन्तु मेरी समझ में एक बात नहीं आई। आप कहते हैं मैंने संसार को त्याग दिया, क्या यह संसार तुम्हारा था जिस को त्याग किया है या किसी अन्य का था? यदि तुम्हार था तब तो त्याग का कुछ और अर्थ हो सकता है, यदि तुम्हारा नहीं था तो फिर तुम भ्रम और धोखे की बात करते हो। पण्डित और ज्ञानी ऐसे त्याग को त्याग नहीं कहते।

राजन्! तुम्हारी बातों के सुनने से मेरे मन में कई शंकाएं पैदा हो गई हैं। मेरी बुद्धि में त्याग और वैराग्य अच्छा है। पर तुम्हारी बातें बड़ी विचित्र हैं, तुम संसार को नाशवान् बनाते हो, जो नाशवान् है वह आप ही छुटा हुआ है उस का छोड़ना न छोड़ना बराबर है, आप मेरी इन बातों को साफ कर दीजिए आपका बड़ा उपकार होगा।

राजा समझदार था, केवल सुझाने की देर थी, रानी की सरल बातों ने उस हृदय पर बड़ा प्रभाव उत्पन्न किया। चिन्ता के मण्डल में घूमने लगा, सचमुच यह संसार मेरा नहीं मुझ को इस के त्याग का क्या अधिकार है?

उस ने रानी से कहा—ऋषिपुत्र! संसार के त्याग से मेरा अभिप्राय अपने राज्य और परिवार से है जिन से अब मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। यह मेरे थे इन से विरक्त बनकर मैं यहां ईश्वर भजन के लिए आया हूं।

समझ में नहीं आये, तुम किस संसार को त्याग रहे हो राज
काज, स्त्री लड़के सब तुम्हारे लिए दुःखदाई नहीं, ईश्वर की
सृष्टि में कोई वस्तु दुःखदाई नहीं है, सब सृष्टि तुम देखते हो
पञ्च तत्वों की बनी हुई है जहां तुम रहोगे वहां वह भी होंगे,
चाहे वन में रहो, चाहे घर में रहो, जीते जी तुम्हारा शरीर
तुम से पृथक न होगा और जिस को शरीर का सम्बन्ध है,
वह क्यों त्याग की डींग मारता है। राजन्! जिन शत्रुओं से
वह भयभीत होकर भागता है वह तो उस के अनन्तर में आठ
संग है, लड़के वाले स्त्री आदि ने क्या बिगाड़ा है? या
केवल मन की लीला है, मन सदा नाच नचाता रहता है
और जब तक वह ऐसे भ्रम में पड़ा रहेगा, संसार के दुः
भोगता रहेगा।

मन के तारे बन गए, वन तज बस्ती मांह।
कहें कबीर क्या कीजिए, यह मन बूझे नांह॥

राजा ने कहा—सच है अब तुम मुझ को क्या शिक्ष
देते हो?

रानी ने कहा—सब से पहले तुम मुझ को यह बताइ
कि इस के बदले तुम मुझ को क्या दोगे।

राजा ने कहा—जो कुछ तुम मांगोगे, मैं देने
हाज़िर हूं?

रानी ने कहा—तुम ने फिर भूल की तुम्हारे पास क्या
धरा है, जो तुम मुझ को दोगे, हां एक बात है, तुम जो भ्रम

वन में आए थे, एक ओर तुम मुझ से उपदेश की इच्छा रखते हो, दूसरी ओर मेरे वचन में तुम को भ्रम नहीं सोचो तुम को ज्ञान का, त्याग का, वैराग्य का, कहां अधिकार है ? यदि तुम ने सच्चा त्याग किया होता, तो कोई मनुष्य तुम को अनुचित कार्य्य की राय देता, न तुम से कहता कि राज-भवन को जाओ, तुमने तो कभी त्याग किया ही नहीं बोलो क्या चाहते हो गृहस्थ हो, अपने घर जाकर सत्य द्वारा उपदेश पाना, अथवा इस वन में रह कर समय और जीवन निष्फल गंवाना। राजा बहुत लज्जित हुआ, उसने कहा—मुझ में सचमुच बड़ी कमी है मैंने कभी अच्छी तरह इस विषय पर विचार नहीं किया क्या मुझे महल में आप का दर्शन होगा ?

रानी ने उत्तर दिया—क्यों नहीं, फिर पति पत्नी के मध्य वार्त्तालाप नहीं हुआ, मान्धाता अपने नगर को वापस आया, उस के आने पर मंगलाचार मनाया गया और फिर धर्म्म राज्य करने लगा परन्तु उस को कई दिन तक चिन्ता रही कि ऋषिपुत्र ने वचन के अनुसार दर्शन नहीं दिया।

राजा ने अपनी चिन्ता का वर्णन रानी से किया, उस ने हंस कर असल भेद से उस को अवगत किया, राजा बहुत प्रसन्न हुआ। दोनों स्त्री पुरुष बड़े आनन्द और प्रेम से रहने लगे।

मान्धाता के मन में रानी का बड़ा सन्मान पैदा हुआ ... लौकिक विषय में रानी की सम्मति से ... उठा

वन में आए थे, एक ओर तुम मुझ से उपदेश की इच्छा रखते हो, दूसरी ओर मेरे वचन में तुम को श्रद्धा नहीं, सोचो तुम को ज्ञान का, त्याग का, वैराग्य का, कहां अधिकार है ? यदि तुम ने सच्चा त्याग किया होता, तो कोई मनुष्य न तुम को अनुचित कार्य्य की राय देता, न तुम से कहता कि राज-भवन को जावो, तुम ने तो कभी त्याग किया ही नहीं था बोलो क्या चाहते हो बता दो, अपने घर जाकर सत्सङ्ग द्वारा उपदेश पाना, अथवा इस वन में रह कर समय और जीवन निष्फल गंवाना। राजा बहुत लज्जित हुआ, उस ने कहा—मुझ में सचमुच बड़ी कमी है मैंने कभी अच्छी तरह इस विषय पर विचार नहीं किया क्या मुझे महल में आप का दर्शन होगा ?

रानी ने उत्तर दिया—क्यों नहीं, फिर पति पत्नी मध्य वार्त्तालाप नहीं हुआ, मान्धाता अपने नगर को — उस के आने पर मंगलाचार

को मीना बाजार में जाना मानो कर्तव्य हो गया था। उ
वसन्त बाला नौरोज़ की घटनाएं सुनती उसको राजपूतों की
क्रिया पर क्रोध आता।

उस ने कहा—राजपूत पतित हो गए, मैं ऐसे राजपूत
से विवाह करूंगी जिस में लज्जा होगी और जो अपनी स्त्री
की इच्छा दिल्ली के पति की आज्ञा से बढ़ कर समझेगा।

जोधपुर के राजा अभयसिंह ने इस की प्रतिज्ञा को
सुना और इस के साथ विवाह की इच्छा प्रगट की। वसन्त
बाला ने कहला भेजा दो शर्तों पर विवाह हो सकता है।
प्रथम तो तुम मुझ को मीना बाजार नहीं भेजोगे, दूसरे कलाजी
एक बहादुर बुद्धिमान् राजपूत को जोधपुर में बसने की
आज्ञा दोगे, यह कलाजी अत्यन्त नेक और शूरमा पुरुष था,
अभयसिंह ने रानी की बात स्वीकार की और वसन्त बाला
का विवाह इस के साथ होगया। कलाजी का अभयसिंह ने
इतना सन्मान किया, कि वह इस का परम मित्र बन गया।

विवाह के पश्चात् चार मास भी सुख चैन से न बीते
थे, कि अभयसिंह को दिल्ली दर्बार में बुलाया गया अभयसिंह
ने चलते समय रानी से कहा—जब मेरी स्वयं हस्त लिखित
चिट्ठी मिले तुम यहां चली आना, क्योंकि मैं बहुत दिनों तक
अकेले न रह सकूंगा।

अभयसिंह कलाजी को साथ लेकर दिल्ली चला आया,
जब अकबर को पता लगा कि उस का विवाह एक महा

जोधपुर की रानी यान मिली है इतना आनन्दित हुआ, कि जिस की सीमा नहीं जब रानी की सवारी दिल्ली के फाटक पर पहुंची तो बादशाह के सिपाहियों ने उस को कालुओं की हवेली में दाखिल कर दिया और द्वार पर शाही पहरा नियत किया गया ताकि कोई रोक टोक न कर सके।

विचारी रानी क्या जानती थी कि क्या हो रहा है जब उस को बादशाह के धोखे और अभयसिंह की अनुपस्थिति का हाल मालूम न हुआ बेचैन हुई, न घबराई वह बुद्धिमती धैर्य्यवती और पतिव्रता क्षत्राणी थी। उस ने बुद्धिमता से सारा हाल मालूम कर लिया, फिर अपनी दासी से सम्मति की कि असल बात यह है, कि बादशाह ने मेरा धर्म नाश करने के लिए मुझे यहां भेजा है । परन्तु भगवान् सब से श्रेष्ठ है मेरा धर्म उन के हाथ है। बादशाह को पता नहीं कि राजपूतनी का साहस सिंहनी से कम नहीं होता सम्भव है शेर से कोई बच जाय किन्तु शेरनी का साहस और तरह का होता है। जिस को प्राण की परवाह नहीं उस को छेड़ना अच्छा नहीं होता, तू जाकर किसी प्रकार कलाजी को खबर कर दे, वह स्वयं मेरे बचाने का उपाय कर लेगा।

यह बांदी भी अत्यन्त विश्वासपात्र और स्वामि-भक्त थी मुंह पर परदा डाले हुए बाहर आई, सिपाहियों ने कहा-कौन है जाने का हुक्म नहीं ?

रानी बहुत बुद्धिमती थी, उस ने न केवल कपड़े बदल लिए, किन्तु हाथ पांव और मुंह भी किसी विशेष रंग से रंग लिए। जब वह फाटक पर आई। सिपाही ने पूछा सखी अब कहां जा रही है ?

रानी ने कहा—तुम भी अजीब मनुष्य हो, मैं बाजार पान लेने जाती हूं।

सिपाही चुप रहा, रानी आगे बढ़ गई दासी प्रतीक्षा कर रही थी, उसने झट साथ लेकर कलाजी के मकान पर पहुंचा दिया, और दोनों आवश्यक तय्यारियों में लग गईं। कलाजी ने अवसर समझ कर रानी के वस्त्र पहन लिए थे। जब निश्चय होगया कि रानी हवेली में पहुंच गई तो दूसरी दासी के वस्त्र बदल लिए और उस को इस प्रकार समझाया, कि तू राजपूत जाति से है, राजपूत अपने स्वामी पर प्राण भी निछावर कर देते हैं, जब कालूखां आवे तो उस को खूब मदिरा पिला देना और फिर यह कटार उस के पेट में भोंक देना आगे जो कुछ होगा उस से डरने की तुझ को आवश्यकता नहीं है। हमारी जाति के जन प्राण का संशय नहीं करते। मेरा नाम न बताना जब सुबह हो जावे लोग पूछें तो कह देना कि नवाब को मार कर रानी भाग गई है।

वह कह कर कलाजी बाहर आया, सिपाही ने पूछा—अब तू कहां चली ?

इस ने उत्तर दिया—मैं शराब लेने जाती हूं।

सती वृत्तान्त

एक दासी ने कहा—कलाजी ने नवाब को मार और रानी को भगा ले गया, बादशाह को जब यह खबर मिली तो वह बहुत क्रुद्ध हुआ, क्योंकि कालूखां उस का विशेष मित्र सरदार था, कलाजी की हवेली घेर ली गई अन्य राजपूत सरदारों की हवेलियों की तलाशी ली गई। परन्तु वहां रानी कहां थी! क्रोधाग्नि को बादशाह ने राजपूतों द्वारा शान्त करना चाहा, कहते हैं कई सहस्र इस अवसर पर वीरता से लड़े और लड़कर प्राण दिये। निदान बादशाह ने फिर बाईस सहस्र सेना रवाना होने की आज्ञा दी, उस ने आकर मारवाड़ में बड़ी लूट मार मचाई।

जिस किले में बसन्तबाला रहती थी, उस पर धावा किया गया, रानी स्वयं बड़ी लड़ाकी और वीर थी। उस ने सन्नाह और संजोवा पहन लिया और जिस समय उस की कमान से तीर निकलते थे, शाही सेना के सिपाही जमीन पर गिर कर लोटने लगते थे। यद्यपि किले में राजपूतों की संख्या थोड़ी थी, किन्तु इनकी वीरता के सन्मुख दिल्ली वालों के पांव न जम सके। बहुत से जन मारे गये शेष सेना को बादशाह ने दिल्ली बुला लिया और शपथ खाई कि जब तक सूयना का किला फतह न होगा तब तक आराम व चैन हराम है।

थोड़े ही दिनों के पश्चात् बहुत बड़ी सेना दिल्ली से सूयाना आई। चिरकाल तक वीर और योद्धा राजपूत घिरे रहे अन्त में वह बाहर निकले और तीन दिन तक शाही

में सज्जित था। किन्तु वसन्तबाला और कलाजी ...
शर्त को स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं थे।

वसन्तबाला को बादशाह की क्रिया पर बहुत क्रोधाग्नि थी, जिस समय अभयसिंह उससे मिलने आया, कुंवरानी तलवार का कबजा पकड़े हुए खड़ी होगई। वह जानती थी कि अभयसिंह का इस दुष्टता में इतना अपराध नहीं था।

उस ने राजा से कहा—तुम स्मरण रक्खो, यह सिर केवल ईश्वर के या तुम्हारे किसी को झुकने वाला नहीं है। शरीर क्षणभंगुर है, इसका क्या ठिकाना है, मुझे कुछ फिकर नहीं है, कि मैं मरूंगी या जिऊंगी, मैं कदापि दुष्ट अकबर की आधीनता स्वीकार नहीं करूंगी। वह जानता है कि मैं सहज शिकार नहीं हूं। मैंने जो विजय कीर्त्ति प्राप्त की है वह सन्धि की शर्तों से बरबाद न करूंगी विजय पाना व वीरता के साथ मरना राजपूतनी का धर्म्म है। किसी की सामर्थ्य नहीं जो मुझको वञ्चित कर सके बादशाह ने अत्यन्त नीचता का काम किया, एक निरपाध स्त्री के साथ यह अधर्म, यह केवल नीच का काम है। उसकी सन्धि के सन्देशे को सुनने के लिये मेरे कान कभी तय्यार नहीं हैं और न होंगे। तुम मेरे पति हो, तुम जानते हो, मैं तुम्हारी पतिव्रता स्त्री हूं परन्तु क्या तुम भूल गये। तुम अपने वचन पर स्थिर नहीं रहे। क्या क्षत्रियों के लिये पहले भी कभी दुष्टता का दोष लगाया गया है? देखो कलाजी सच्चा क्षत्रिय है, जिस ने

जो उस समय सब अधिक आदर और सन्मान समझा जाता था।

जिस समय प्रभात हुआ और सूर्य्य भगवान् उदय हुए रानी ने कहा—"देखो यह सूर्य्यवंश की पताका है इस का उथत होना तुम्हें सङ्केत करता है की युद्ध क्षेत्र में चल कर अपने पवित्र धर्म्म पर ऊर्द्ध्वगामी हो जावो।

राजपूत उमण्डते हुए समुद्र की लहरों की भान्ति आगे बढ़े, शत्रु सेना चटान का किनारा था, जिन से लग कर वह टकराते थे, यद्यपि यह लहरें आकाश तक ऊंची होने की इच्छुक थीं, यद्यपि इन की इच्छा थी कि यह शत्रु दल को जो इन के सन्मुख थे डुबा दें, परन्तु इन में इतनी संख्या कहां थी। इने गिने दो चार सहस्र राजपूत मरने मारने के लिये निकले, शाही फ़ौज़ घबरा उठी और उस के पांव उखड़ गए, अकबर रानी के तीर से घायल हुआ। निकट था कि वह भाग खड़ा हो परन्तु रानी ने ललकार, दुष्ट! क्यों भागता है हमारे पास संख्या कम है हम स्वयं मरने के लिए निकले हैं, शत्रुओं ने फिर धीरता से सामना किया।

एक २ वीर राजपूत ने कई २ मनुष्यों को मारा और फिर आप भी उन के लाशों पर सो पड़ा। बाङ्के शूरमा इस तरह लड़े कि शत्रु दङ्ग हो गए एक ने भी रणक्षेत्र न छोड़ा। सब ने खुशी २ प्राण दिए। और उन के बीच में फत्तेजी और बसन्तबाला की भी लाश पड़ी हुई देखी गई।

६—सरमा।

॥ दोहा ॥

प्रेम बराबर भक्ति नहीं, प्रेम बराबर ज्ञान।
प्रेम भक्ति बिन साधव, सब ही थोथा ध्यान॥

[चरणदास]

यह पवित्र साध्वी स्त्री रावण के भाई विभीषण की स्त्री थी, इस के बाप का नाम शयलोश था, जो गन्धर्व जाति का प्रसिद्ध राजा हुआ है। सरमा की उत्पत्ति मानसरोवर के निकट हुई थी। इस प्रकार प्रसिद्ध है कि एक वर्ष महावृष्टि होने के कारण मानसरोवर भर गया था और उस की बाढ़ के कारण पहाड़ का बहुत सा भाग गिर पड़ा और कई एक पहाड़ी ग्राम नदिया की भेंट हो गए, बहुत से मनुष्य नष्ट हो गए। सरमा भी उस बाढ़ में बह गई थी, परन्तु ईश्वर की कृपा से जीवित रही इसी कारण से इसका नाम सरमा पड़ा, यह बहुत सुन्दर, बुद्धिमती, उदार, धार्मिक, धैर्यवती और पति भक्त थी और सदा सब बात में विभीषण की आज्ञाकारी थी विभीषण उस की सम्मति पर चलता था, पति पत्नी में इतना प्रेम था, कि एक दूसरे के सच्चे प्रेम-पात्र थे, और यह केवल [illegible]

रावण के

जब विभीषण राम के पास चला गया, रावण ने सरमा को सीता की सेवा पर नियत किया, यहां रह कर वह निशि दिन सीता को धैर्य्य देती रहती और भक्ति की महिमा सुनाती रहती। एक समय का वृत्तान्त है कि जब रावण के किसी मदारी ने राम का कटा हुआ सिर सीता को दिखाया तो वह बहुत व्याकुल हुई तो सरमा ने धैर्य्य दिया कि यह राक्षसी माया का कर्त्तव्य है, लङ्का में ऐसे सहस्रों शिल्पी वर्त्तमान हैं जो मनुष्य की ऐसी आकृति बना देते हैं उस की बातों से सीता को धैर्य्य हुआ।

दूसरे अवसर पर जब इन्द्रजित् के तीरों से मूर्च्छित हो कर राम और लक्ष्मण क्षेत्र में पड़े थे। रावण ने सीता को पुष्पक विमान पर बिठा कर उनकी दशा देखने के लिए भेजा राम और लक्ष्मण को संज्ञा-रहित (बेहोश) देख कर सीता बहुत व्याकुल हुई इस अवसर पर भी सरमा साथ थी, और सीता को दुःखी देख कर समझाया कि यह मरे नहीं केवल मूर्च्छित हैं, क्योंकि उनका मुख तेजोमय है और वानर आदि सावधानी से रक्षा करते हैं। यदि राम मर गए होते तो सम्भव न था कि वानर इस प्रकार निर्भीक चित्त होकर यहां खड़े रहते, क्योंकि दुनियां में कोई ऐसी जाति नहीं जो राक्षसों से न डरती हो।

जिस समय राम ने लङ्का को विजय किया और विभीषण को राज गद्दी प्रदान की, सरमा लङ्का की रानी कहलाई

सत्यवती को लेकर ऋषि वन में चला आया, बहुत काल बीत गया, सत्यवती के कोई सन्तान उत्पन्न नहीं हुई इस बात से यह सचिन्त रहने लगी, इसी प्रकार उस की माता के भी पुत्र न था, गाधिराज भी इस बात से दुःखित था

दैवयोग से एक दिन भृगु ऋषि का उधर से गमन हुआ सत्यवती ने बड़े सन्मान से उन का स्वागत किया, सत्यवती के बर्त्ताव से प्रसन्न होकर उन्होंने पूछा यदि तेरी किसी बात की इच्छा हो तो वर्णन कर।

सत्यवती ने कहा—महाराज ! मुझे किसी बात की अभिलाषा नहीं केवल इस बात का दुःख है, कि न मेरे कोई पुत्र है न मेरी मात। क यदि किसी विधि से यह इच्छा पूर्ण हो सके तो आप का अनुग्रह होगा।

ऋषि ने कृपा-पूर्वक उसे विधि बताई जिस से सत्यवती के गर्भ से जमदग्नि ऋषि और गाधिराज के यहां विश्वामित्र उत्पन्न हुआ और इस प्रकार इस धार्मिक स्त्री के प्रताप से दोनों वंशों का कल्याण हुआ ॥

जिस प्रभात का हम वर्णन कर रहे हैं, इस समय एक सच्चे धार्मिक मुनि कनक ऋषि का गमन उस ओर हुआ जहां वह नन्हीसी वैश्य कन्या मुंह में अंगूठा चूस रही थी, मुनि ने इधर ध्यान दिया, कन्या धरती पर पड़ी हुई थी, दुष्ट माता पिता ने इतने भी नहीं सोचा था। कि इस के शरीर को वस्त्रों से ढक देते, कन्या बहुत सुन्दर थी, ऋषि के हृदय में बड़ी दया आई, और उस ने इस मांस के लोथड़े को अपने हृदय से लिपटा लिया और कहने लगे। शोक! मेनका तू संसार में किस प्रकार नीचता का जीवन व्यतीत कर रही है, सम्भव नहीं कि तू अपने कर्मों के दण्ड से बच सके। मेनका इस अभागी कन्या की मां थी।

वह काल अब की तरह झूठे वर्णाश्रम का समय न था, जब नाम के द्विज मनुष्यत्व को बट्टा लगाते; दयालु ऋषि कन्या गोद में लिए हुए आश्रम में आया और अपनी स्त्री से कहने लगा। प्रिये! देख आज ईश्वर ने हम पर कितनी कृपा की, इस कन्या की पालना का अधिकार हमें प्रदान किया, आज से यह हमारी कन्या है और यह मुझे कदली के वृक्ष तले मिली है, अस्तु इस का नाम कदलीगर्भा होगा। कनक ऋषि यदि देवता था तो उस की स्त्री सच्ची देवी थी। उस ने लड़की को अपनी गोद में ले लिया मुख चूम कर अपनी सन्तान की तरह हृदय गत प्यार से पालने लगी।

ऋषि का आश्रम अंशुमती नदी के तट पर अंशुमती

नीतिज्ञ धार्मिक, शीलसम्पन्न साहसवाली और वीर भी थी।

जब वह ८ १० वर्ष की हुई उस ने घर का सारा बोझ अपने सिर पर ले लिया, पिता से विद्या पढ़ती और घर के प्रबन्ध में सहायता करती। उस ने घर में तरह २ के पक्षी पाले जैसे कि तोते, मैना, कोयल, मोर, हंस, हरिण, जब वह घड़ा हाथ में लेकर वृक्षों को सींचने के लिए निकलती यह सब उस के इर्द गिर्द होते। जितने सुन्दर और सुगन्धयुक्त फूल हैं सब आश्रम की वाटिका में वर्तमान थे,' चम्पा, मोतिया, मोगरा, चमेली, जूही, गुलाब, केतकी, रऊद। ऋषि इस के परिश्रम को देख कर मुसकराता हुआ, कन्या का मुख चूमता।

अब कदलीगर्भा की आयु सोलह १७ वर्ष की हुई ऋषि आश्रम से बाहर फल फूल लेने गया हुआ था, ऋषि पत्नी घर के काम काज में मग्न थी कदलीगर्भा अपनी सहेलियों के साथ वाटिका में विचारती थी, हठात् राजा दृढ़ वर्मा उधर गमन हुआ, उसने ऐसी सुन्दर स्त्री कभी नहीं देखी थी, वह चकित होकर इसे देखने लगा। कदलीगर्भा को एक अपरिचित जन की यह क्रिया बहुत विचित्र प्रतीत हुई राजा भी बड़ा रूपवान् था, कुछ लज्जा और कुछ भय के कारण वह वृक्ष की आड़ में छिप रही। परन्तु दोनों मध्य में केवल दो चार हस्त का अन्तर था, दृढ़ वर्मा [illegible] मन में कहने लगा हो न हो यह मन कनक ऋषि [illegible]

नीतिज्ञ धार्मिक, शीलसम्पन्न साहसवाली और वीर भी थी।

जब वह ८ १० वर्ष की हुई उस ने घर का सारा बोझ अपने सिर पर ले लिया, पिता से विद्या पढ़ती और घर के प्रबन्ध में सहायता करती। उस ने घर में तरह २ के पक्षी पाले जैसे कि तोते, मेना, कोयल, मोर, हंस, हरिण, जब वह घड़ा हाथ में लेकर वृक्षों को सींचने के लिए निकलती यह सब उस के इर्द गिर्द होते। जितने सुन्दर और सुगन्धयुक्त फूल हैं सब आश्रम की वाटिका में वर्त्तमान थे,' चम्पा, मोतिया, मोगरा, चमेली, जूही, गुलाब, केतकी, रऊद। ऋषि इस के परिश्रम को देख कर मुस्कराता हुआ, कन्या का मुख चूमता।

अब कदलीगर्भा की आयु सोलह १७ वर्ष की हुई ऋषि आश्रम से बाहर फल फूल लेने गया हुआ था, ऋषि पत्नी घर के काम काज में मग्न थी कदलीगर्भा अपनी सहेलियों के साथ वाटिका में विचारती थी, हठात् राजा दृढ़ वर्मा उधर गमन हुआ, उसने ऐसी सुन्दर स्त्री कभी नहीं देखी थी, यह चकित होकर इसे देखने लगा। कदलगिर्भा को एक अपरिचित जन की यह क्रिया बहुत विचित्र प्रतीत हुई राजा भी बड़ा रूपवान् था, कुछ लज्जा और कुछ भय के कारण वह वृक्ष की आड़ में छिप रही। परन्तु दोनों मध्य में केवल दो चार हस्त का अन्तर था, दृढ़ वर्म्मा अपने मन में कहने लगा हो न हो यह मन कनक ऋषि की कन्या है, जिस के

नीतिज्ञ धार्मिक, शीलसम्पन्न साहसवाली और वीर भी थी।

जब वह ८ १० वर्ष की हुई उस ने घर का सारा बोझ अपने सिर पर ले लिया, पिता से विद्या पढ़ती और घर के प्रबन्ध में सहायता करती। उस ने घर में तरह २ के प पाले जैसे कि तोते, मैना, कोयल, मोर, हंस, हरिण, जब घड़ा हाथ में लेकर वृक्षों को सींचने के लिए निकलती सब उस के इर्द गिर्द होते। जितने सुन्दर और सुगन्धयु फूल हैं सब आश्रम की वाटिका में वर्तमान थे,' चम्पा, तिया. मोगरा, चमेली, जूही, गुलाब, केतकी, रऊद। ऋ इस के परिश्रम को देख कर मुस्कराता हुआ, कन्या का मु चूमता।

अब कदलीगर्भा की आयु सोलह १७ वर्ष की हुई ऋ आश्रम से बाहर फल फूल लेने गया हुआ था, ऋषि पत्न घर के काम काज में मग्न थी कदलीगर्भा अपनी सहेलियों के साथ वाटिका में विचारती थी, हठात् राजा दृढ़ वर्मा उधर गमन हुआ, उसने ऐसी सुन्दर स्त्री कभी नहीं देखी थी, यह चकित होकर इसे देखने लगा। कदलीगर्भा को एक अपरि चित जन की यह क्रिया बहुत विचित्र प्रतीत हुई राजा भी बड़ा रूपवान् था, कुछ लज्जा और कुछ भय के कारण वह वृक्ष की आड़ में छिप रही। परन्तु दोनों मध्य में केवल दो चार हस्त का अन्तर था, दृढ़ वर्मा अपने मन में कहने लगा हो न हो यह मन कनक ऋषि की कन्या है, जिस के

है, इस लिए मनुष्य का मांस खाती है। राजा ने एक
यह प्रवाद सुना, पर कुछ ध्यान न दिया, अस्तु एक
रानियों ने मुर्दे की लाश नदी से मंगा कर कदलीगर्भा
महल के उस भाग में रखवा दी जहां से राजा का गम
गमन था।

राजा ने लाश देख ली, रानी की ओर से उस के हृद
में घृणा उत्पन्न हुई, वह मन्दिर में तो गया, रानी ने उठ कर
स्वागत भी किया, परन्तु राजा ने कुछ बात चीत नहीं की
और उलटे पांव लौट आया रानी महा दुःखी हुई, यह क्या
बात है, वह नहीं जानती थी उस के विरुद्ध क्या मक्कारी हो
रही है सारी रात चिन्ता में बीती।

प्रातः काल राजा की आज्ञा से दो अनुचर महल में आ
और रानी से कहा—महाराज की आज्ञा है, तुम महल में
ने के योग्य नहीं हो उचित है, वन में जाकर रहो, रानी
इस के सुनने से जो दुःख हुआ, वह अवर्णनीय है।
व्याकुल हुई परन्तु विवश थी, उठ खड़ी हुई, और
ों के साथ आश्रम की ओर चल पड़ी, चलते हुए मा
में एक मुर्दा दृष्टिगत हुआ, उस ने समझा
ही मेरे निकलवाने का कारण हुई हो, परन्तु सोच
का अवसर नहीं था, बिचारी महल से बाहर
के निकलने की खबर
गार में दावानल की त

ऋषि ने कहा—राजन्! इस समय तुम अपने
नहीं। ऋषि के वचन को सुनकर यह कहना कि "
सच हो, उस का महा अपमान करना है उचित था
अनुसन्धान करते और फिर मेरी कन्या को दण्ड देते।

जब ऋषि राजा को समझा रहा था, तो एक शिष्य
दृष्टि नाई पर पड़ी। उसने कहा—यह मनुष्य है जो
जाता देखा गया।

ऋषि ने उस से पूछा—सच २ बता यह क्या बात है,
कोई बात गुप्त न रख।

उस ने कर जोड़ कर कहा—महाराज मैंने रुपये के
लोभ से रानियों की बात में आकर ऐसी अनुचित क्रिया
थी रानी निर्दोष है। बूढ़े ब्राह्मण ने भी अपना अपरा
स्वीकार किया।

राजा ने देखा कि कदलीगर्भा निर्दोष है, उस ने कर
जोड़ कर ऋषि से अपने अपराध के लिए क्षमा प्रार्थना की,
नाई और ब्राह्मण को देश निकाले का दण्ड दिया और महल
की रानियों को भी यथोचित दण्ड दिया, उस कदलीगर्भा
का हाथ पकड़ लिया और अपने किए पर पछताने लगा,
देवी ने अत्यन्त नम्रता और धीरता से उत्तर दिया, महाराज!
मैं आपकी दासी हूं, आप को अधिकार है चाहे जैसा
वर्ताव करें।

अभ्यास था, यह प्रायः राजा के साथ आखेट के लिए जा
करती थी। एक दिन राजा आखेट के लिए वन में गया था
रानी और राजा दोनों घोड़ों पर सवार थे और यह इस वेग
से जारहे थे कि राजा ने उन्हें थामना उचित नहीं समझा,
फल यह हुआ कि यह अपने साथियों से बहुत दूर हो गया
और कोई आखेट भी हाथ न लगा। मध्यान्ह के समय वह
सुनसान वन में प्रविष्ट हुए क्षुधा खूब लगी हुई थी, राजा ने
वृक्ष से फल फूल तोड़ कर क्षुधा निवारण की और एक
वृक्ष के नीचे दोनों विश्राम करने के लिये बैठ गये रानी बहुत
थक गई थी, उस को नींद आगई, परन्तु राजा जागता रहा,
आध घण्टा के पश्चात् रानी को सोता देख इतस्ततः जंगल
में विचरने लगा, इतने में एक शेर उस के सन्मुख आया
राजा ने ढाल तलवार से उसे बध करना चाहा, किन्तु
दुर्भाग्य से तलवार का वार एक वृक्ष के तले पर जा लगा
अब शेर की बन आई, उस ने राजा को घायल करके मुर्दा
समझ अपनी थली के साथ उठा ले गया और उस का खून
चाट कर सो रहा, राजा घायल था और बार बार रानी याद
आती थी, परन्तु कुछ कर नहीं सकता था, पास ही ऊंची
झाड़ी थी, अगर उस पर चढ़ जाता तो बच सकता, परन्तु
ने का कोई सामान नहीं था।

जब रानी की आंख खुली पति को पास न देख कर डर
किन्तु घोड़ा पास बन्धा था, समझा इधर उधर ...

रानी ने कहा—प्राणनाथ ! ऐसी दशा में दो उपाय हो सकते हैं, एक तो यह कि शत्रु की आधीनता स्वीकार की जाय। दूसरे यह कि भलीभान्ति युद्ध किया जाय। मैं कभी नहीं चाहती कि आप शत्रु के आधीन हों। मैं चाहती हूं कि आप उस के सन्मुख जायें और मुझे आज्ञा दें कि मैं पृष्ठ की ओर से उस की सेना पर आक्रमण करूं। राजा ने स्वीकार कर लिया राजा ने सारे नगर वासियों को बुलाकर समझाया, कि शत्रु सिर पर आगया है, धन और प्राण सब की हानि का भय है उचित है कि जिस को अपने देश की रक्षा का ध्यान है वह मेरे साथ हो।

राजा के साथ सेना थी ही रानी ने इन नए जनों को साथ लिया। जब दृढ़धर्म्मा की फौज शत्रु सेना से लड़ने लगी। रानी दूसरी ओर से शत्रु सेना पर जा गिरी जिस से उनका साहस जाता रहा और रणक्षेत्र से पांव उखड़ गए। और कठिनता से भाग कर अपने प्राण बचाए।

दूसरे दिन प्रताप ने सन्धि के लिए पत्र भेजा जिसे ने सहर्ष स्वीकार किया।

वीरता देखकर ऐसी धाक जीवन में किसी शत्रु ने अनुमति नहीं किया। देश सब तरह थे और सब रानी को

९—सुनीती ।

॥ दोहा ॥

पतिव्रता तो पति को भजे, पीव २ रट लाय ।
जीवन यश है जगत् में, अन्त परमपद पाये ॥
पति का मार्ग कठिन है, ज्यूं खाँडे की धार ।
डिग मगे तो गिर पड़े, निश्चल उतरे पार ॥
पति का मार्ग कठिन है, विरला जाने कोय ।
आदि अन्त निश्चल रहे, सोई सुहागिन होय ॥
तन मन अर्पा पीव को, अन्तर रही लौ लाय ।
प्रेम प्रीत के कार्य्य में, यह तन जाय तो जाय ॥
जीवन मृतक हो रही, तन मन से नहीं नेह ।
कहें कबीरता नारी की, हम चर्णन की खेह ॥

यह भाग्यवान्, बुद्धिमान्, चतुर, पतिव्रता स्त्री ध्रुव
माता और महाराजा उत्तानपाद की रानी थी। जहां इस
और सम्पूर्ण गुण थे। वहां यह अत्यन्त स्थिर-चित्त, शान्
चित्त, धर्म्मात्मा, नीति विशारद, ज्ञानी, ध्यानी थी और प
भक्ति को परम धर्म्म समझती थी। और पति-परायण

परन्तु दुर्भाग्य स्त्री के उदर से उत्पन्न हुआ है, यदि मेरे उदर से जन्मता तो निःसन्देह राजा की गोद में बैठ सकता था, तू अज्ञान बालक है, तुझ को यह स्थान कदापि नहीं मिल सकता। हां एक बात है यदि तू तपस्या करके अपने शरीर को त्याग दे और पुनः मेरी कोख से जन्म ले तो निःसन्देह तुझ को यह सुख मिल सकेगा।

रानी की बात सुन कर ध्रुव ने पिता की ओर दृष्टि की, परन्तु उत्तानपाद की आंखों को पितृ स्नेह से खाली पाकर उस से रहा न गया, उस का कोमल हृदय फट गया और फूट २ कर रोने लगा। बालकों में एक दूसरे के प्रति प्राकृतिक सहानुभूति होती है, बड़े भाई को रोता देख कर उत्तम रोने लगा, और आंसू पोंछ कर उस को धैर्य देना चा... किन्तु राजा रानी में से किसी ने इस की ओर ध्यान न दि... ध्रुव इसी तरह सिसकता हुआ सुनीति के पास ... और माता की गोद से लिपट कर रोने लगा, ... भी इस के साथ था, सुनीति दोनों बच्चों को ... से लगा कर पूछने लगी—, पुत्र ! तू क्यों रोता ... किसने तुझ को मारा तू तो किसी प्रकार का ... भी नहीं करता"। ध्रुव ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया ... की निर्दयता और सौतेली माता के अत्याचार ... बताया। सुनीति के हृदय दुःख हुआ।

कभी कठोर भाव धारण नहीं करता, हम स
सन्तान हैं, वह हम सब की अहर्निश रक्षा करता है।

ध्रुव के हृदय में माता के उपदेश से बड़ा प्रभाव
यह सरल बालक कहने लगा कि मैं वन में जाकर तप
प्राण त्याग करूंगा, जिस में अब दुःख न हो।

सुनीति ने सुनकर कहा—पुत्र यह तू क्या कह
तू मेरा प्यारा मेरी आंखों का तारा है, तुझ को प्राण त
की क्या आवश्यकता है?

ध्रुव ने उत्तर दिया कुछ चिन्ता नहीं, मैं अब इस
मैं न रहूंगा, जिस में मेरा इतना अपमान होता है, मां
मैं क्या कहूं, पिता जी को मेरा इतना अपमान नहीं
चाहिए था, मैं घर से जाता हूं वन में तप करूंगा औ
शरीर को त्याग दूंगा।

सुनीति बोली—हे पुत्र! तुझे माता पिता की नि
करनी चाहिये। सुनीति की कोख से उत्पन्न हुए बाल
ऐसा कहना अनुचित है। निन्दा करना केवल उन प्र
का काम होता है जो पुरुषार्थ हीन हैं। मनुष्य संस
अपने कर्मों के भिन्न कुछ नहीं लाता और कर्म के वि
नहीं ले जाता इसलिए दूसरे के वैभव को देख
को अपने प्रतिकूल पाकर किसी के मन में क्यों
हो, हम जो कुछ हैं हमारे कर्म ने हम को बनाए
कर्म करेंगे वैसा ही आगे चल कर बनेंगे।

हुई, उस ने उत्तम को गद्दी देने का विचार किया, परन्तु कुमार उत्तम ने इन्कार किया, किन्तु सुरुचि ने कर बद्ध कहा—"महाराज! इस कुल में बड़ा भाई गद्दी का अधिकारी है मैंने अज्ञान के वश होकर ध्रुव को घर से निकाला था, यदि आज्ञा हो तो मैं जाकर उस को मोड़ लाऊँ"। इस पर इच्छा प्रगट की सुरुचि रानी मधु बन में आई। ध्रुव तप में मग्न था, अब उस ने नेत्र खोले सौतेली माँ खड़ी थी। ब्रह्मचारी ने माता को दण्डवत् प्रणाम किया, सुरुचि ने आशीर्वाद देकर कहा—वत्स! तू मेरे दुर्वचनों के कारण बन में आया था विद्या, बुद्धि और तेज में तेरा नाम प्रसिद्ध हो चुका है मैं इस लिए बन में आई हूं, कि तुझ को ले चलूं और तेरा स्वत्व तुझे प्राप्त हो, तू मेरा अपराध क्षमा कर घर चल राज कार्य्य संभाल। ध्रुव ने उत्तर दिया "माता! मैं कृतकृत्य हूं तेरे वचनों से मेरा बड़ा सत्कार हुआ। सुनीति माता की सम्मति लेकर राज गद्दी मेरे छोटे भाई को देदें"। किन्तु सुरुचि ने कहा—नहीं देखा न होवे उत्तम राज करने से इन्कार करता है। मेरी आज्ञा है, घर चल कर अपना अधिकार सम्भाल यदि तू मेरा सन्मान करता है तो मेरी आज्ञा भङ्ग न कर राजा और सुनीति दोनों महल में तेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं"।

ध्रुव ने फिर कोई बात नहीं की यह तुरन्त उठ खड़ा हुआ, राजा व रानी उस के स्वागत के लिए नगर से बाहर

था जब प्यार करने वाली माता अपने बच्चे को ऐसे स्थान में रखना नहीं चाहती थी। जहां उस के मनुष्यत्व के भावों नष्ट होने का भय था। परन्तु एक दिन आज है असम अपमान की कुछ परवाह नहीं करते, क्या हम सचमुच पूर्वजों की सन्तान हैं! हमें तो कुछ भ्रम सा हो रहा है कि हम में उन के कोई लक्षण वर्त्तमान नहीं॥

१०—सती शूरवाला।

॥ दोहा ॥

प्रेम प्रीति की रीति को, विरला जाने कोय।
प्रेम प्रीति घट संचरे, सत पद पहुंचे सोय॥
तन मन तुम पर वार हूं, पिजरें प्राण अरु स्वास।
प्रेम प्रीति की खड्ग ले, काटूं जम की फास॥
पिव परिचे तब जानिया, पिव सों हिल मिल होय।
पिव की लीला मुख पड़े, प्रगट दीखे सोय॥
पवन नहीं पानी नहीं, नहीं धरण आकाश।
तहां कबीरा सन्तजन, साहब पास खवास॥
पांच सखीं पिव २ करें, छटा जो सिमरे मन्न।

सती वृत्तान्त

शूरवाला अपने पति के इलाके में आई हुई थी, उस के स
दो चार अन्य गृहस्थ स्त्रियां थीं । इस स्थान को रमण
देख कुछ दिन यहां पर वास करना उचित समझा अभी
को यहां आए थोड़े ही दिन हुए थे कि प्रवीण राज ना
ठाकुर वहां आगया। यह वृद्ध था परन्तु इस की पूर्व
सेवा से अकबर इस को सन्मान की दृष्टि से देखता था,
देनें जब इतस्ततः फिर रहा था उस की दृष्टि शूरवाला
पड़ी और वह मोहित हो गया, वृद्ध होने के कारण वह
देहीन भी होगया था उस ने शूरवाला के विषय में लोगों
ता लिया। शूरवाला अपने आप को प्रगट करना नहीं
ती थी प्रवीण राज को उस के विषय में मिथ्या सूचना
ई वृद्ध ने सोचा गरीब क्षत्राणी का हाथ आना क्या कठि
। उस ने एक दूती को प्रलोभन देकर इस काम पर नि
किया और कुछ रुपया अगाऊं दिया, वृद्धा कुछ अच्छी
हीं थी। उस ने शूरवाला से परिचय कर प्रवीण राज
च्छा प्रगट की। पहले तो ठकुराणी इस की बात सुन
न में बहुत हंसी पश्चात वृद्ध को शिक्षा देने की इच्छा
से शब्दों में उत्तर दिया कि वृद्धा को आशा हो गई औ
ब यह प्रवीण राज से सहस्रों रुपये के कपड़े आदि देनि
उपहार स्वरूप लाने लगी और शूरवाला की सहेलियों
वितरण करने लगी, उस ने समझा कि इस ढङ्ग से सब स
यां प्रसन्न हो जायंगी और प्रवीण राज का विवाह करा

विवाह करके अपनी दुलहन को भगा ले जावें। पीछे
माता पिता सुनेंगे बुरा न मानेंगे क्योंकि राजपूतों में इ
प्रकार की रीति है।

दूती ने जाकर प्रवीण राज को सन्देसा सुनाया, वह
राजी होगया और इने गिने मनुष्यों को लेकर ब्याहने आया।

सन्ध्या का समय था, दूती विवाह का प्रवन्ध देखने के
लिए घर में आई, उस के साथ दो एक स्त्रियां और भी थीं।
जब दूती ने दुलहन को शृङ्गार करने की प्रेरणा की।
शूरवाला बोली—आज मेरा सिर बहुत ज्यादह दुःख
रहा है।

यह सुनकर दूती घबड़ाई, शूरवाला भी डर गई
कहीं बनी बनाई बात बिगड़ न जाय। वह दूती को साथ
कर दूसरे कमरे में चली गई। और उस को प्रसन्न कर
कहने लगी।

मुझको कभी शृंगार करने कराने का अवसर नहीं मिला,
इस लिए पहले तुम अपना शृंगार करालो और दुलहन की
भ्रान्ति बन कर बैठो। फिर तुम को देख कर मैं भी उसी
प्रकार बनने की चेष्टा करूंगी। वृद्धा इस बात को न समझी,
हंसती हुई लड़कियों की बात में आगई, सहेलियों ने
को बुटना लगाया, और नहला धुला कर मांग निकाली,
वस्त्र और आभूषण पहनाए और घूंघट निकाल कर
ने में बिठा दिया दूती बीच २ में आप बताती थी कि

ाह करो वह करो। जब यह कार्यवाही अन्दर हो र
ाक सखी ने प्रवीण राज के पास जाकर कहा-चले
ान विवाह के लिए बैठी है। किन्तु यह मैं तुम्हें
ाखती हूं कि यह स्वभाव की हठीली और जिद्दी
किसी बात में जिद करे तो तुम ने खयाल न करन
विवाह के पश्चात् यहां से भगा ले जाना। ऐसा न हो
रिश्तेदार आ जाये और दंगा होजाय।

प्रवीण राज ने कहा—बहुत अच्छा ऐसा ही होगा

इन स्त्रियों ने प्रवीण राज के साथियों को ऐसा क
लिया था कि उस दिन उन को अफीम अधिक खि
उधर दूती के साथ भी ऐसा ही किया गया।

जब दुलहा अकेला घर में आया तो केवल घर में
थीं। दूती को अब ज्ञात हुआ कि यह लड़कियें क्य
वाली हैं, इस ने चाहा कि शोर मचाय परन्तु सहे
उसे ऐसा दबोच रक्खा था कि इस बात का वह स
कर सकी। जल्दी २ फेरे दिए गए और जब फेरे
चार सहेलियों ने दूल्हे को सुना कर कहा—कि गूरव
बाप आगया है, यह सुन कर वृद्ध के होश जाते रहे
झट पट दुलहन को रथ में डाल कर अपने घर
लिया और जब तक दो चार कोस नहीं निकल ग
नहीं लिया।

इधर गूरवाला ने भी अपनी सहेलियों समेत

रास्ता लिया। उस को भय था कि कहीं प्रर्थाप राज और उस के साथी इस अपमान का बदला न लें।

जब ठाकुर एक गांव में पहुंचा उस ने अपनी नों दुलहन से बात चीत करना आरम्भ की, परन्तु वह चुप थी, और अपना मुंह छिपाए हुए सिसक रही थी। ठाकुर से न रहा गया, उस ने घूंघट उठा कर मुंह देखा और आश्चर्य मूर्छि होकर रह गया सिर से पांव तक आग लग गई। काटो लहू नहीं बदन में क्योंकि नई दुलहन शूरवाला नहीं, किन्तु दूती निकली।

बुड्ढा चिल्ला उठा, हाय! मुझ को धोखा दिया गया, सख्त धोखा दिया।

तब दूती ने रो २ कर अपना हाल सुनाया। ठाकुर को जो लज्जा हुई वह वर्णन से बाहर है। निदान जब उस का ज्ञात हुआ कि शूरवाला विजयसिंह की प्यारी स्त्री थी, और उस ने जान बूझ कर इस का अपमान किया है, वह दुर्बुद्धि मौन रहने के स्थान में अकबर के पास जाकर नालिशी हुआ जब वह अपनी दुर्दशा सुनाने लगा, अकबर के दरबार में बीरबल, टोडरमल, जैनखां, भगवानसिंह आदि प्रसिद्ध सरदार व अमीर वर्त्तमान थे। बादशाह अकबर बृद्ध की खातिर किया करता था, दरबारी उस की बातें सुन कर मन ही मन में हंसते रहे। अकबर भी मुसकराया और जब दरबारियों ने देखा की बादशाह स्वयं इस विषय को उपहास की दृष्टि से देखता है

आप को वंचित न करूंगी, जो क्षत्रिय के लिये विशेष है। आप सहर्ष मैदान को जाइए यदि जीवित रहे तो फिर मिलेंगे यदि लड़ाई के बहाने मौत आई है, और भी हर्ष की बात है, यह अवसर रोज २ नहीं प्राप्त होता। जाइये तीर और तलवार के घाव सीने पर खाइए, वीरकला भी पीछे २ आप की सेवा के लिए आवेगी और आप जहां वैकुण्ठ में अप्सराओं के पति बनेंगे, वहां यह दासी भी आप की सेवा के लिए उपस्थित होगी" ॥

रत्नसिंह कुछ शोक में डूब रहा था, रानी ने फिर कहा-"राजन्! यह जन्म हम को इस लिये मिला है कि हम यहां कुछ काम कर दिखायें, अपनी जाति और वर्ण के धर्म को पालन करें, पशुवत् जीवन हमारा धर्म नहीं है। नाम और यश को छोड़ना क्षत्रिय प्रिय नहीं समझते, देखो मन्दोदरी ने लंका के युद्ध में स्वयम् इन्द्रजित् को रण में भेजा था, अभिमन्यु महाभारत में किस प्रकार लड़ा था, मैं जिस समय सुनूंगी कि तुम ने शत्रुओं को वीरता से संहार किया मेरा हृदय आनन्द से फूला न समायेगा॥

रत्नसिंह ने कहा—"सत्य है तुम्हें ऐसा ही कहना उचित है। विमला हमारे मित्र अमरसिंह राठौड़ की कन्या है, एक ओर उस की सहायता दूसरी ओर मेवाड़ राज की सेवा मेरा कर्तव्य है, मैं जाता हूं। परन्तु हृदय तुम्हारे पास रहेगा।

रानी ने कहा—अब आप मुझ को लज्जा दिला रहे हो ! आवश्यकता के समय, सत्यता के समय, धर्म्म के समय, राजपूत दुर्बलता कदापि नहीं दिखाते, निश्चिन्त रहो, मैं तुम्हारे निमित्त बैठी मङ्गल कामना करती रहूंगी।

रत्नसिंह ने दबी जिह्वा से कहा—मैं तुम्हारे कहने से जाता हूं।

रानी ने कहा—यह क्या बात है, कदाचित् आप मेरे कुल को नहीं जानते।

इस के पश्चात् फिर बात चीत नहीं हुई, रत्नसिंह विदा हो कर थोड़ी दूर गया, एक दासी दौड़ी हुई, रानी के पास आई और कहने लगी—राजाजी बहुत उदास और मुख मलिन थे। रानी ने कहला भेजा चौंड़ावत जी को यदि ऐसा ही मेरा ध्यान है, तो मुझ को लड़ाई में साथ ले चलें मैं साथ चलने को तय्यार हूं। परन्तु चौंड़ावत ने स्वीकार न किया। उस ने उत्तर में कहला भेजा मुझ को न राना की आज्ञा है और न मैं पूछना उचित समझता हूं, मैं अपना हृदय तुम को दिए जाता है।

दासी ने आकर रत्नसिंह का सन्देशा रानी से कहा—वीरकला कहने लगी, उन का हृदय मेरा ओर है तो वह युद्ध में क्या करेंगे ? हमारे कुल की स्त्रियां जीने की परवाह कम किया करती हैं, कितने शोक-स्थल होगा, यदि मेरा पति मिथ्या प्रेम के कारण अपने धर्म से पतित हो, मैं

चाहती हूं, विजय चौंडावत की हो और इस सुयश...
भागिनी बनूं यह संसार असार है, लोग रोज़ ज...
मरते हैं। दासी मेरे पति को यह चीज़ जो मैं देती...
और उन से कह कि मांस दारु से प्रेम वृथा है। प्रेम...
ईश्वर और देश का हो। यह कह कर रानी ने एक हा...
अपने केश पकड़ लिए और दूसरे हाथ से तलवार लेकर...
के देखते २ अपना सिर काट कर दासी की तरफ...
दिया।

दासी उस की आज्ञानुसार सिर को उठाकर रत्नसिं...
के पास लेगई और रानी का सन्देशा रो २ कर कह सुनाया...
रत्नसिंह को जो दुःख हुआ वह वर्णन नहीं हो सकता,
परन्तु रानी की वीरता ने उसे वीर स्वरूप बना दिया वह...
मैदान की ओर बढ़ा और वहां जाकर इस वीरता से ल...
कि देखने वाले चकित रह गए।

यह एक सती का सच्चा वृत्तान्त है क्या ऐसा उदाहरण
कहीं और भी मिल सकता है। ऐसा ईश्वर के प्यारे यहां
पैदा होते थे और यह उसी का फल था कि भारतवर्ष स्वर्ग
धाम बना हुआ था, ज़िन्दगी का लक्ष्य चाहे वह किसी
प्रकार का हो ऐसे ही वीरों और २ साहस धारियों का भाग
है।

मोती उपजे सीप में, सीप समुन्द्र मांहि।
मुरजीवा कोई काढ़ ही, दूजा गम नांहि॥

कुसंस्कार और अज्ञानता कुछ इतनी हिन्दुओं में छागई थी,
कि इस विचारी कन्या के उत्पन्न होने के साथ ही पिता ने
वन में फैंक देने की आज्ञा दी, क्योंकि ज्योतषियों ने कहा था
कि यह बुरी लग्न में उत्पन्न हुई है, यदि बाप की दृष्टि इस पर
पड़ गई तो यह अन्धा हो जायेगा। स्वार्थी, नीच अन्धवि
श्वासी राजा ने रात के समय रानी को धोखा देकर कन्या
को एक निर्दय जन के हवाले किया, कि वन में छोड़ आ
परन्तु कहावत प्रसिद्ध है कि मारने वाले से बचाने वाला
प्रबल है, विचारी कन्या रात भर वन में पड़ी रही पशुओं
को भी उस की निराश्रयता पर दया आई। किसी ने उस
को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचाई, प्रभात के समय
हडमती नामी कुम्हार का उधर से गमन हुआ, वह मिट्टी
खोदने के लिए आया था। जब रोते हुए बच्चे का शब्द कान में
पहुंचा तुरन्त उधर गया। उस के कोई सन्तान नहीं थी
उस ने प्रसन्न होकर इस को गोद में उठा लिया और घर में
लाकर अपनी स्त्री के हवाले किया।

जब उस को पता लगा कि यह कन्या राजा की है, प
वह भय के मारे कच्छ देश के भुज्जनगर में चला आया औ
कन्या उस को रान (मैदान) में मिली थी, प्रथम् उस का
नाम रानिक रक्खा, पश्चात् में यह कन्या रानिक देवी के नाम
से प्रसिद्ध हुई जब रानिक देवी युवावस्था को पहुंची उस
काल में कोई स्त्री इस से अधिक रूपवान् नहीं थी, वह मधुर

चकित होकर परस्पर कहने लगे कि यह स्त्री
की रानी होने के योग्य है।

सिद्धराज पाटन का सुलङ्की राजा था यह
मनुष्य उस के भाट थे, जब यह पाटन में पहुँचे
मिल कर कहा—यद्यपि आप की सोलह रानियां
पद्मिनी उन में एक भी नहीं है।

राजा ने कहा—तुम मेरे भाट हो और देश देश
हो। यदि कोई पद्मिनी दृष्टिगत हो तो ले आओ, भ
उत्तर दिया, सोरठ देश में एक कन्या इस प्रकार की
राजा ने प्रसन्न होकर सारा वृत्तान्त सुनना चाहा।

भाटों ने कहा—महाराज वह ऐसी विचित्र कन्या
कि हम उस के रूप का वर्णन नहीं कर सकते, वह सोरठ
मज्योड़ी नामक ग्राम में रहती है उस के पिता का नाम हड
मती है। जो जाति का कुम्हार है।

राजा ने कहा—मैं नीच कुल की कन्या से विवाह न
करूंगा, मेरे कुल को कलङ्क लगेगा, परन्तु भाट उत्तर देने में
तत्पर थे।

भाट ने कहा—फल, कन्या, रत्न, विद्या यह नीच से
भी लेनी चाहिए। नीति में ऐसा कहा है और कौन जाने वह
किसी ऊञ्ची जाति की हो। सम्भव है कुम्हार ने उसे लेकर
पालना की हो।

भाटों ने राजा को यह सुन कर मना लि

ऐसा कोई समरथ कहां, तोड़े गढ़ गिरनार।
राजों में है अति बली, राजा राखनगार॥

युवकों ने जबरदस्ती की, रानिक देवी को राखन
पास ले गए। रानिक देवी को सिद्धराज के साथ
होने की वार्ता की, अब तक खबर नहीं थी। जब वह
गढ़ में पहुँची, रथ से उतरते समय उस के पांव में ठे
गयी और रुधिर बहने लगा, वह व्याकुल हुई और
से कहने लगी :—

पग धरते असगुन भया, पग लागी में ठेस।
रानिक को दुःख है बड़ा, कि उजड़े सोरठ देश॥

परन्तु युवकों ने उसे धैर्य दिया, और कहा—चि
न करो, बहुधा ऐसी घटना हो जाती है।

जब राखनगार ने इस परम सुन्दरी को देखा, तन,
से मोहित होगया। बड़े धूम धाम से विवाह रचा गया
अब रानिक देवी के कुल और वंश का पता लगा, उस के ह
की कोई सीमा न रही। क्योंकि सिन्ध का राजा बड़ा मान
नीय समझा जाता था, जूनागढ़ की प्रजा इस विवाह से
बहुत आनन्दित हुई और सब आनन्द के गीत गाने लगे।

सोरठ देश के ग्राम में, लायो एक कुम्हार।
बेटी राजा सेर की, ब्याही राखनगार॥

सिद्धराज यहां अपनी धुन में मस्त था, वह जानता था

यह प्रकृत भेद से अनजान था। सम्पूर्ण वृत्ता
लगा तो वह चिन्तित हुआ। रानिक देवी पतिव्र
यह राखनगार से ब्याहे आने पर प्रसन्न थी। पर
में किसी बात का ठिकाना नहीं वह क्या जानती थ
जल्दी उस पर आपत्ति आ पड़ेगी और शत्रु किले प
मण करेगा सिद्धराज के साथ उस की चतुर माता
देवी थी, जो युद्ध में बेटे के साथ रहती थी। यद्यपि
नेक थी, लड़ाई भिड़ाई से घृणा करती थी, परन्तु
अवसर पर कुल को कलंक लगने का भय था, इस लिए
बेटे को लड़ने के लिए तय्यार करके लाई थी।

फौज ने जूनागढ़ के किले को घेरा हुआ था, जि
झरोखे में रानिक देवी बैठी थी, मलिन देवी हाथी पर ब
कर उधर से निकली रानिक देवी ने उसे देख कर कहा

यह अपना रनिवास है, किस ने तम्बू तानिया।
कहाँ से आया सेठ, कहाँ का है बनिया॥

मलिन देवी इस की बात सुन कर मुस्कराई, कि को
महा भोली भाली लड़की है, उस ने उत्तर दिया:—

यह दल है सिद्धराज का, लूटे सोरठ देश।
मार सहेगा अति घनी, राखनगार नरेश॥
रानिक देवी ब्याहली, किया अधिक अपमान।
रानी थी सिद्धराज की, पती ॥

कार करावें। और रानिक देवी भी आप को मिल जायगी। आप १४० योधा जो शूरवीर हों हमारे साथ कर दें हम अभी बात की बात में किला आप के हाथ करा देते हैं। दोनों किले दार हमारे वश में हैं आवाज देते ही द्वार खोल देंगे।

सिद्धराज अवसर सोचने वाला मनुष्य था, मलिन देवी ने विचारने के पश्चात् यथेष्ट संख्या सिपाहियों की साथ कर दी।

बात बनी बनाई थी, देशल का शब्द सुनकर किलदारों ने द्वार खोल दिया अभी वह अपने अचम्भे को प्रकाश भी न करने पाए थे, कि शत्रुओं की तलवारों ने ढेर कर दिया। पश्चात् राखनगार के महल की ओर बढ़े। राखनगार लड़ने के लिए बाहर निकला लोहे से लोहा बजने लगा लाशों के ढेर लग गए। एक कवि लिखता है :—

छल से धोखे से लिया, वैरी ने गिरनार।
घर का भेदी मिल गया, लंका हो गई छार॥

राखनगार लड़ते हुए मारा गया, यह लड़ाई ऐसे अवसर पर हुई जब राखनगार अचेत था, गरीब अचानक मारा गया, वह न फौज एकत्र कर सका न अपनी रक्षा का उपाय कर सका। जब राखनगार मर गया दोनों अधर्मी भाई रानी के महल की ओर गए। फाटक खुलवाने लगे रानी व्याकुल हुई उसे क्या पता था, कि क्षण के क्षण में क्या हो जायगा, उस ने झरोखे से सिर निकाल कर पूछा

कौन है जो इस समय द्वार खुलवाना चाहता है? इन्होंने अपना नाम बताया उस ने भानजे समझ कर द्वार खुलवा दिया। यह सिपाहियों को लेकर गए। ग़रीब अपनी सहेलियों के साथ बैठी थी।

भानजों ने कहा—राजा मारा गया, तुम हमारे साथ चलो

रानिक देवी के नेत्र अब जाकर खुले और जो किंवदन्ति उस ने देशल के विषय में सुन रक्खी थी, सच्ची दिखाई दी। बेबसी की दशा में घृणा की दृष्टि से दोनों की ओर देखा उस की दृष्टि में कुछ ऐसा प्रभाव था कि यह कांप उठे और उलटे पांव सिद्धराज के पास चले गए।

इतने में रानी ने महल का द्वार बन्द कर दिया, थोड़ी देर में सिद्धराज स्वयं उस जगह आया, क्योंकि जब राजा मारा गया तो सामना कौन करता। राखनगार के दो पुत्र जो रानिक देवी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे, उस के हाथ पड़ गए। रानिक देवी झरोखे पर अब से उदास बैठी थी।

सिद्धराज ने उसे सम्बोधन करके कहा—सुन्दरी! यह वर्षों से सेना का युद्ध तेरे लिए हुआ है। मेरे भाट तेरी सगाई मेरे साथ कर चुके थे राखनगार ने ज़बरदस्ती की उस का फल मिल गया, अब तू च   और पाटन देश को सुशोभित कर।

रानी ने उत्तर दिया:—

साईं ने कृपा करी, दीना अचल सोहाग।

मैं तो राखनगार की, कोई पूर्वला भाग॥

सिद्धराज ने कहा—देख मैंने तेरी खातर अब तक दोनों बालकों को जीवत रक्खा है, यदि तू मेरा कहना मानेगी तो मैं इन को भी वहां ही भेजूंगा जहां राखनग गया है। रानी बोली :—

पिव पर तन मन वार हूं, पुत्र मित्र और भाय।
पिव का मार्ग नहीं तजूं, यह तन जाय तो जाय॥

सिद्धराज बहुत क्रुध हुआ, परन्तु सोचा कदाचित् समझाने से मान जाये। उस ने पुनः उस से कहा—सुन्दरी! अब तो जो होना था, वह हो गया, जिस ने जैसा किया था वैसा पाया अब तू समझ से, काम ले पाटन नरेश तुझ को अपना पटरानी बनाने को तय्यार है, सिद्धराज हर प्रकार से तेरा आदर सन्मान करेगा। किन्तु यदि तू ने उस की प्रार्थना स्वीकार न की तो परिणाम अच्छा न होगा।

रानी कहा :—

राती साती पिव की, पिया प्रेम अथाय।
अपने प्रण को न तजूं, केती करे उपाय॥
जा घट प्रेम प्रगट भया, भय का नहीं वहां ठौर।
जहां प्रेम वासा करे, तहां न ठहरे और॥
जीती पर्वत से गिरूं, डूबूं समुद्र मझार।
पति का मार्ग न तजूं, मैं पतिव्रता नार॥

आव पुत्र उस देश को, जहां है राखनगार।
पिता गोद तुम खेलियो, मैं जाऊं बलिहार॥

लड़के ने निर्भयता से अपना सिर आगे कर दिया दूसरा लड़का भी इसी प्रकार मारा गया।

बेटे मर गए, पति सदा के लिए छुट गया, रानी महल से बाहर निकाली गई, हाथ पांव बांध दिए गए, उस को बहुत कुछ समझाया गया, परन्तु उस के स्वभाव में परिवर्तन नहीं आया। वह निरन्तर यही कहती रहीः—

पिंजर खाली रह गया, प्राण गए पिव संग।
पिव रंग राती पतिव्रता, कब हूं न होय कुरंग॥

वह कैदी होकर पाटन देश लाई गई, सिद्धराज को विश्वास था, ज्यों २ दिन व्यतीत होते जायेंगे उस को राख नगार का प्रेम कम होता जायगा। परन्तु यह उस का भ्रम था, इस के विरुद्ध दिन २ उस का अनुराग बढ़ता गया, वह बहुत बेसुध हो गई, उस का स्वभाव असाधारण हो गया, कभी रोती, कभी हंसती परन्तु जब सिद्धराज का सन्देशा सुनाया जाता आग बबूला बन जाती थी, खाने पीने की रुचि नहीं करती थी, शरीर सूख कर कांटा सा हो गया, परन्तु मुख पर एक प्रकार का तेज प्रकाशित था जो प्रेम और भक्ति का प्रकाश था।

अस्तु जब सिद्धराज ने देखा कि पत्थर को जोक लगने

आग लगे उस नगर को, व्यापै दुख क्लेश।
मैं तो अब नहीं जाऊंगी, छोड़ दिया उ दे

अंग उस के धैर्य और साहस को देख कर
रह गए। एक स्त्री ने उपहास में उस से कहा—सखी
पति तो अब नहीं रहा, तेरे आंसू क्यों नहीं निकलते
मौत क्यों नहीं आती।

रानिक देवी ने उत्तर दिया :—

बिरह तेज तन में तपे, अंग सभी अकुला
पट सुना जिउ पीव में, मौत ढूंढ फिर जा

संसार की भी लीला विचित्र है, कल जो र
रानी थी आज उस की यह दशा है। उस को छेड़ने
ऐसी बात कही जाती हैं।

जब वह इतस्ततः फिर चुकी सिपाहियों ने उसे
राज के सन्मुख उपस्थित किया।

राजा ने कहा—सुन्दरी! क्या अब भी तुझ को ह
करना उचित है? तू देखती है राखनगार मर गया। अब
उस से मिलने की आशा नहीं, मैंने तेरे दिखाने के लिए उस
की लाश रख छोड़ी थी, उचित है तू हठ न कर मेरा क
मान जा।

इन शब्दों को सुन कर रानिक देवी के शरीर में आग
लग गई, उस ने क्षुब्ध होकर कहा—मदान्ध! पापी! क्षत्रिय

देख, मैं स्वामी के साथ संसार से कूच करूंगी। जिस
अब तक रक्षा की थी, मैं उस का मृत्यु में साथ दूंगी।
सिद्धराज ने समझा यह सती होना चाहती है।
उसी समय उस ने चिता का प्रबन्ध कर दिया, सा
सामान बात की बात में एकत्र हो गया, राखनगार की ला
जो कई दिन से बेकफन पड़ी थी मंगाई गई, उस को देख कर
रानिक देवी का हृदय फिर उमड़ आया वह लाश को गोद
में लेकर बैठ गई, गिरनार के स्त्री पुरुष उस के इर्द गिर्द जमा
हो गए। चिता को अग्नि दी गई, आग की लपटें निकल २
कर आसमान से बात करने लगीं, लाश के साथ रानिक देवी
का शरीर भी जलने लगा, वह धीरता और शान्ति से बराबर
जलती रही।

जब अग्नि की ज्वाला से उस के सिर के बाल जलने
रानिक देवी ने सिद्धराज को सम्बोधन करके कहा—
तू ने हमारे राज्य का नाश किया, मेरे पति को निरपर
मारा, मेरे पुत्रों का अकारण वध किया, परमात्मा इस
बदला तुझ से लेंगे, तेरा भी राज छिन जाएगा, तू भी मार
जाएगा और तेरे पश्चात् कोई तेरे वंश का नाम लेवा न रहेगा,
मैं यह कह कर दुनिया से जाती हूं।

अन्तिम शब्द मुश्किल से उस के मुख से निकलने पाए
कि उन के साथ ही उस का प्राण पक्षी भी निकल
और लोगों के देखते २ दोनों की

१३—उभयकुमारी ।

प्रेम भक्ति के पन्थ पर, विरला चाले कोय ।
सती चले के साधवा, और से भक्तन होय ॥

उभयकुमारी मालवा देश के चन्देरी नगरी के राजा प्रतापसिंह की सुन्दर और धर्मात्मा पुत्रवधू थी, वह बड़ी उदार और दयालु थी। इस का विवाह सूरसेन नाम सैनिकपुर के राजा के साथ हुआ था, यह भी बड़ा नेक वीर पुरुष था। जब से उभयकुमारी इन के यहां विवाहित हो कर आई थी। वह प्रति दिन निरन्तर सूरसेन की सेवा को अपना परम धर्म समझती थी, कहने को तो यह दोनों पति पत्नी थे। परन्तु यह दोनों बड़े धर्मात्मा थे उभयकुमारी। से दो चार दिन के लिए भी पृथक् रहना नहीं चाहती थी

कहते हैं सूरसेन किसी कारण से श्रावस्ती नगरी के राजा के अधीन था, वर्ष में कभी २ उस को दरबार में जाना पड़ता था, राजा ने इसे कुछ गांव भी दे रक्खे थे, जिन का वह स्वामी बना हुआ था। सूरसेन यूं तो सब प्रकार से धार्मिक था, परन्तु स्वामी भक्ति का गुण उस में कूट २ कर भरा हुआ था, श्रावस्ती का राजा इस के बल पराक्रम और पुरुषार्थ से बहुत प्रसन्न था और चाहता था कि वह प्रायः

उसने कर जोड़कर कहा—महाराज ! मेरी स्त्री प्रतीक्षा में होगी, यदि मैं तीज को न पहुंचा तो कुशल न होगी।

राजा ने रोकना उचित न समझा, सूरसेन तेज सां-ड़नी पर चढ़ कर चल पड़ा, पानी झूम २ बरस रहा था, बिजली कौंध रही थी, परन्तु वह अकेला अपने घर को जा रहा था।

विरह भुजङ्गिन वश करी, किया कलेजे घाव।
विरहिन अङ्ग न मोड़ ही, ज्यों भावे त्यों खाव॥

पति का प्रेम और अनुराग बढ़ता गया, विरहाग्नि प्रचण्ड होती गई, पास एक खाट पड़ी हुई थी, इस दिन स्त्रियां पलङ्ग पर नहीं सोतीं, परन्तु प्रेम के उमङ्ग में कुछ नहीं सूझता रसम व रीति का ध्यान हृदय से जाता रहता है, वह सती स्त्री इस पर लेट रही, समाधि की दशा हो गई, सुध बुध जाती रही, और इसी दशा में पति के ध्यान में उस ने रात्रि के तीसरे पहर अपने प्राण त्याग दिये और परम पद को इस प्रकार प्राप्त हुई।

इधर साण्डनी सवार भागा आरहा है, साण्डनी बहुत तेज है, वह सिर से पांव तक तर है, परन्तु प्रेम पांव आगे को बढ़ा रहा है, न बरसात का ध्यान न बिजली का भय, वह इस प्रकार बगटट चला आ रहा है। राम २ करके मार्ग समाप्त हुआ, वह घर पर आ पहुंचा।

द्वारपाल ने पूछा—कौन ?

इस ने कहा—मैं हूं सूरसेन द्वार खोलो।

द्वार खोल दिया गया, नौकर चाकर स्वामी का शब्द सुन कर जाग उठे और उस के पास दौड़ आए, परन्तु उमय कुमारी नहीं आई।

सूरसेन ने पूछा—रानी कहां है ?

जान पड़ते थे, उन के लौकिक सुख में किसी प्रकार की कमी न थी॥

किन्तु दुनियां सदा एक रस नहीं रहती, कभी भोर, कभी सांझ, कभी दिन, कभी रात, दुःख सुख सब पर आता है। रामचन्द्र ऐसे महात्मा और युधिष्ठिर जैसे धर्मराज भी इस से बच नहीं सके। कन्नौज के राजा चन्द्रसिंह ने धारानगर पर चढ़ाई की सूर्य्यसिंह दिल खोल कर लड़ा परन्तु समय प्रतिकूल था और सेना काम आई और इस को भाग कर अपनी जान बचानी पड़ी॥

समय की विचित्रता देखिए कहां एक देश का राजा और कहां यह दशा कि एक जन भी साथ नहीं, रानी जो लाड़ और प्यार में पली थी, जिसकी सेवाके लिए सैकड़ों दासियें खड़ी रहती थीं, वन २ पांव पखोड़ते हुए जा रही है। एक बालक पिता के कन्धे पर दूसरा माता की गोद था, कभी पांव में कांटे गड़ जाते थे, कभी भूख और प्यास सताती। राह की थकान से रानी को ज्वर आजाता था। कभी २ दुःख से रो पड़तीं, परन्तु क्या किया प्राण का बचाना आवश्यक था।

इस प्रकार पैदल चलते हुए दिल्ली पहुंचे, और एक धर्मशाला में आकर ठहर गए, क्योंकि घर का किराया देने के लिए कौड़ी पैसा पास नहीं था, दिल्ली में आपको कोई [illegible] पहचान नहीं जानता था, किसी न किसी प्रकार काम करना आवश्यक था। भीख मांगी नहीं जाती थी, क्योंकि

मेरा हाल न पूछो, हम लोग इसी प्रकार विपद् में दिन काट रहे हैं। पहिले जन्म में न ईश्वर की भक्ति की थी, न शुभ कर्म किये थे, इसी कारण से दुःख भोग रहे हैं। कर्म में किसी का वश नहीं, जो जैसा करता है, वैसा फल पाता है आप काष्ठ का भाव कीजिये, मुझ दुःखयारी का नाम धाम न पूछिये।

सौदागर ने उस के बोल चाल से जान लिया कि यह किसी उच्च घर की है। उस ने कहा-अच्छा तू अपना नाम न बता, परन्तु तू मेरे पास रहना पसन्द करे तो तेरे दुःख दूर हो जावेंगे। मैं रात दिन तेरी सेवा करूंगा, तेरे जैसी सुन्दरी के लिये इस तरह दुःख उठा के मरना उचित नहीं है।

वनदेवी ने समझ लिया कि इसके मन में पाप है वह वहां से चलने लगी, परन्तु सौदागर ने उसे पकड़ लिया और तम्बू भीतर खींच कर चुप कर दिया और [illegible] [illegible] पर बिठा कर साथ निकला।

वनदेवी [illegible] [illegible] दुःख के साथ जा रही थी, और इस प्रकार [illegible] रही थी, जैसे कसाई का [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

मेरी स्त्री होगी। दूसरा कहता था, नहीं मैं तुझ से बड़ा हूं स लिए मेरा स्वत्व है।

रानी यह दशा देख कर व्याकुल हुई। परमात्मन्! एक ए से तो मर २ के बची थी, अब यह नये दुष्ट कहां से पैदा े गए, क्या करूं किधर जाऊं आकाश दूर पृथिवी कठोर है। ब यह इस चिन्ता में थी, उनके मध्य तलवार चलने लगी, रस्तु जो प्रबल था, उस ने दुर्बल को मार कर गिरा दिया, ौर रानी का हाथ ज़बरदस्ती पकड़ने लगा, रानी ने उस ा हाथ झटक दिया।

ठग ने कहा—देख तेरे लिए मैंने अपने साथी का वध केया, अभी तलवार म्यान में नहीं गई, जो साथी को मार कता है, वह स्त्री को कब छोड़ेगा। उचित है तू मेरे साथ ल अन्यथा तेरी भी यही दशा करूंगा।

रानी वीर और साहसी थी, कहने लगी—पापी! तू मुझ ो क्या डराता है, ईश्वर की इच्छा के बिना तू मुझ ो नहीं मार सकता। यदि मेरी मौत आगई है तो मैं मरने ो तय्यार हूं, पर तेरे साथ कदापि न चलूंगी। जो कुछ तुझ े बन कर ले, मैं कुछ भी तुझ से नहीं डरती और न कभी ुझ दुष्ट का कहना मानूंगी।

डाकू ने फिर उसे नरमी से समझाना चाहा, परन्तु ानी ने साफ़ इनकार कर दिया। इस पर ठग ने क्रोधित हो ाल ली और चाहता था कि एक

समय कोई सहारा नहीं न किसी का आश्रय है। प्रभु! मेरी लाज तेरे हाथ है, तू अपने दीन और दुःखी बालकों की सदा रक्षा करता है, तू मेरी सुध ले।

> सुख करो मेरे सांइयां, मैं हूं बहुत बल मांद।
> आपे हि यह जाऊंगी, जो नहीं पकड़ो बांह॥
> अवसर बीता अल्प तन, पीव रहा परदेश।
> सुध मेरी लीजो हे प्रभु, काटो कष्ट क्लेश॥

रानी ईश्वर की स्तुति कर खूब रोई, प्रार्थना करने से हृदय में कुछ ढारस आई, उस ने आंसू पोंछे सिर उठाकर देखा सब बेसुधि की अवस्था में सो रहे हैं, अवसर अच्छा था, वह दबे पांव उठी और भाग कर वन की ओर चली गई जब दूर निकल गई तो चैन आई जान में जान आई राम २ कह फिर दुष्ट के पंजे से छुटकारा मिला, जहां आ ठहरी थी, वहां हिंसक पशु बहुत थे।

यहां आकर उस ने सांस ली औ
कर फिर उच्च स्वर से रोने लगी
के शब्द से सारा वन गूंज उठा
कर चिल्लाती थी। परन्तु वह क
रोती २ मूर्च्छित हो गई और उसी
हुई तो क्या देखती है कि पास
झगड़ रहे हैं, एक कहता है, मैंने इ

समझती है और मेरे साथ रहने में कुछ कष्ट नहीं समझती तो चल कुछ दिन हमारे साथ जीवन व्यतीत कर, मैं तेरे पति को खोज दूंगा।

रानी खुशी से उस के साथ झोंपड़े में आकर रही, वहां वह स्त्री पुरुष बड़े प्रेम से उस की सेवा और सन्मान करते थे।

यह तो रानी का हाल था, अब राजा का हाल सुनिए।

सूर्य्यसिंह लकड़ी का भार सिर पर लिए हुए नगर में आया, रानी नहीं थी। दो चार दस घण्टे तक उस की प्रतीक्षा की पर वह न आई, आह! एक ओर दोनों दुखिया बालक अलग तड़प रहे थे। पिता जी! माता कहां गई?

बेटे सबर करो। अभी आती होगी, परन्तु माता कहां थी? जो वहां आती। गरीब बालकों को रोती छोड़ कर नगर के सारे महल्ले छान डाले, किन्तु उस का कहीं पता न लगा। एक दिन दो दिन सबर किया, किन्तु धैर्य्य की भी कोई सीमा होती है। दो छोटे बच्चे रात दिन माता के बिना चैन नहीं लेते थे, जब वह रोने लग जाते तो घण्टों रोते ही रहते, सूर्य्यसिंह उन को शान्ति देने की चेष्टा करता, किन्तु वह भी अपने आंसू थाम नहीं सकता था। दुःख अन्त में तेरी भी सीमा होना चाहिए। राज पाट गया, धन मान गया, काष्ठ बेच कर जीने की व्यथा आई, इस पर भी तुझ को दया नहीं आई।

चौथे दिन जब बच्चे बेचैन हो गए, सूर्य्यसिंह का दि-
ल भर आया, उस ने दोनों को अपने कन्धों पर बैठा लिया
और जङ्गल २ ग्राम २ वनदेवी का नाम पुकारता हुआ चल
निकला, लोग इसे देख कर ठट्ठा करते थे, कहीं यह बावला
तो नहीं हो गया, क्योंकि वनदेवी का नाम भी कुछ भोंड़ासा
था किसी ने कुछ पता न दिया।

यह दोनों बच्चों को लादे हुए उस के खोज में भटकता
रहा, उस समय इन बच्चों की आयु पांच छः वर्ष की होगी।
इन में चन्द्र बड़ा और विजय छोटा था, दोनों वन में अपनी
माता को पुकारते चले जा रहे थे। जब कोई उत्तर न पाते
निराश होकर रोने लग जाते, उस समय सूर्य्यसिंह का
कलेजा फट जाता।

मार्ग में एक भारी नदी आई, पर न बेड़ा बिचारा कैसे
पार होता। परन्तु उस ने लकड़ियां काट कर एक बेड़ा
बनाया, उस पर अपने दोनों बच्चों समेत सवार हुआ। लोग
सच कहते हैं, विपद् एक ओर से नहीं आती, जब वह बेड़े
को मंझधार में ले गया तो वहां पानी बड़ा तेज़ था, बेड़ा
सम्भल न सका उखड़ गया, दोनों बच्चे गोते खाते हुए बह
निकले। सूर्य्यसिंह भी डूबने से बचा। बिचारा कठिनता
से किनारे आया बच्चों का कहीं पता न लगा। न उन की
लाश ही मिली, राजा ने समझा वह डूब गए, अपने भाग्य
पर रोता हुआ आगे बढ़ा, राज गया, पतिव्रता स्त्री का भी

में बह गए थे, ईश्वर ने उन की जान बचाई। एक को मछुए ने पकड़ा, दूसरे को लकड़हारे ने दोनों की वहां पालना होने लगी, यद्यपि वह केवट और लकड़हारे के यहां रहते थे। परन्तु दोनों को आखेट का शौक था और क्षत्रियपन के सारे गुण इन में वर्त्तमान थे। वह आस पास के ग्राम में रहते थे, किन्तु परस्पर मिलने का अवसर नहीं हुआ था।

सती वनदेवी भील के यहां रहती थी, और वहां उसे किसी तरह का दुःख नहीं था, परन्तु वह फिर भी पति और पुत्रों के लिए तड़पती रहती थी, भील ने बहुत खोज किया पर कहीं पता न लगा।

एक दिन भील आखेट को गया था और भीलनी [illegible] में घास छील रही थी, वनदेवी अकेली झोंपड़े में सोई थी एक व्याघ्र जो पास में लगा हुआ था, झोंपड़े में घुस उस को उठा ले गया।

भीलनी की दृष्टि उस पर जा पड़ी वह चिल्लाने और रोने लगी, जब भील घर आया तो उस ने रोकर कहा—[illegible] को शेर उठा ले गया।

भील को जो दुःख हुआ वह अवर्णनीय है, क्योंकि वह उसे अपनी बहिन की तरह प्रिय समझता था, वह रोता हुआ पश्चात्ताप करता घर के निवासस्थान की ओर चला, [illegible] साथ थी ईश्वर की लीला पर विचार [illegible] कि उस समय [illegible] हुआ था, [illegible] उस के पास पड़ी थी।

पर गुलाब छिड़का गया, उस ने नेत्र खोल दिए चारों जन मिल कर प्रसन्न हुए। रानी भीलनी समेत महल में गई। राजा ने रानी और पुत्र से उन के वृत्तान्त सुने और अपना उन्हें सुनाया, भील भीलनी की सेवा सुन कर कृतज्ञता प्रगट की प्रभात के समय दरबार में सब अपराधी उपस्थित किए गए। राजा ने सौदागर को देश निकासन का दण्ड दिया और भील को अपना विश्वास-पात्र और भीलनी को रानी के साथ रहने की आज्ञा दी।

इस घटना के दो वर्ष पीछे उस ने चढ़ाई करके धारा-नगर को भी अपने अधिकार में कर लिया और शेष आयु आनन्द में व्यतीत की।

जिस प्रकार परमात्मा ने उन्हें मिलाया, उसी तरह और सब को मिलाए, धन्य है। वह जन जो उस पर भरोसा करते हुए धर्म्म को नहीं त्यागते, क्योंकि वह ईश्वर के सच्चे पुत्र कहलाएंगे और लौकिक परीक्षा के पश्चात् उन्हें शुभ और कल्याण का जीवन प्राप्त होगा।

गाड़ी तय्यार की गई, लोगों को अचम्भा हुआ, पति रोगग्रस्थ है, उस के जीने की संशय है। यह न्हाने का कौन सा समय है। परन्तु भानुमति सीधी गङ्गा पर गई न्हा धो॰ कर स्वच्छ वस्त्र पहने और वहां से लौट कर १५—२० मिन्ट तक अपने पति को एकाएक दृष्टि से देखती रही।

मुरलीधर ने पूछा—तुम न्हा आईं।

भानुमति ने कहा—हां न्हा आई हूं, अब आप कुछ चिन्ता न करें, परमात्मा का नाम लें, परमात्मा जो करते हैं, अच्छा करते हैं, हम अल्प बुद्धि वाले मनुष्य उस के भेद को नहीं जानते, वह अन्तर्य्यामी घट २ का वासी सब कुछ जानता है। हमारी भलाई किस बात में है। इस लिए उस की इच्छा के अनुसार रहना बहुत उत्तम है, मुरलीधर को यह बातें सुनकर बहुत अचम्भा हुआ, इतने में और सम्बन्धी भी उस के देखने के लिए आने जाने लगे स्त्री किसी के सन्मुख अपने पति के पास नहीं बैठती। जब भानुमति ने देखा कि और जन रोगी के देखने को आ रहे हैं। वह चुप की सी उठी कोठे पर चली गई और हाथ में सन्दूर का डब्बा लिए हुए धरती पर लेट रही।

मुरलीधर के हाथ पांव घड़ी प्रति घड़ी शीतल होते गए अस्तु जब ठीक बारह बजे उस को चन्द्रायण लग गया और थोड़ी देर में उस ने अपने प्राण त्याग दिए घर में रोना पीटना मच गया, और मृत देह को धरती पर लिटा दिया गया।

सती वृत्तान्त।

दैवात् मुरलीधर सख्त बीमार हुआ चिरकाल तक
रस के सिविलसरजन के इलाजाधीन रहा, किन्तु कुछ
न हुआ। दिन प्रति दिन दुर्बलता बढ़ती गई, भानुमति
दिन इस के पास बैठी रहती और अपने हाथ से औषधि
देती, प्रायः रात २ भर जागती रहती और उस की स्वस्थत
के लिए परमात्मा से प्रार्थना करती थी, परन्तु उस की आयु
दिन पूरे हो चुके थे, रोग ने जय प्राप्त करली थी।

एक दिन प्रातःकाल मुरलीधर ने भानुमति को अपन
निकट बुलाया और निर्जनता में कहने लगी—देवी! आज
हमारा वियोग होगा, लोग कहते हैं कि नाक टेढी होगई है,
कान लटक गए हैं, यह लक्षण मृत्यु के हैं, मुझे तेरे साथ
रहने से बड़ा लाभ हुआ है, यह ईश्वर की कृपा थी, कि तुम
सी धार्मिक स्त्री मुझ को मिल गई थी, अन्यथा पुलिस की
सेवकाई में पुरुष कब अच्छा रह सकता है, मैं हज़ार २
धन्यवाद देता हूं, यदि मैंने तुझ को कुछ कहा सुना हो तो
क्षमा करना, यह कहने के पश्चात् मुरलीधर के नेत्रों से आंसू
जारी हुए।

भानुमति ने कहा—आप रोते क्यों हैं, मैं
आप का साथ दूंगी, यदि आज्ञा हो तो मम
मुरलीधर ने सोचा, कहीं यह दु:ख
न दे दे।

भानुमति ने धैर्य दिया, आप चि
की सेवा में उपस्थित होजाऊंगी।

एक ही अर्थी पर दो लाशें निकलीं और सब सम्बन्धियों ने उन का काशी के गढ़मुक्तेश्वर के घाट पर लाकर दाह कर्म किया।

यह घटना २७ जुलाई सन् १८६६ की है, समाचार पत्रों में भी इस का कुछ २ वर्णन हुआ था।

पाठकगण! परमात्मा करें, तुम भी पतिपरायण सती का हाल सुनकर ईश्वर परायण बनो तुम में उस का सा प्रेम उत्पन्न हो।

जा घर प्रेम न सञ्चरे, सो तो जान समान।
जैसे खाल लोहार की, सांस लेत बिन प्राण॥

सब लोग मुरदे के निकट बैठे थे, भानुमति वहां नहीं थी, लोगों को अचम्भा हुआ।

सास ने कहा—देखें ऊपर पड़ी होगी, जब स्त्रियां ऊपर गईं भीतर से द्वार बन्द था, कई बार उसे पुकारा गया। परन्तु उत्तर कौन देता, उत्तर देने वाला तो चल बसा है।

कठिनता से द्वार खोला गया, भानुमति धरती पर पड़ी है। आंखें बन्द हैं, होंठ पथरा गए हैं। परन्तु मुख ज्योतिमान् है, मुख की शोभा अधिक बढ़ गई है। हाथ में सम्पुट डब्बा वर्तमान था, जो सुहाग का चिन्ह है।

स्त्रियां इस सती की लाश पर गिर पड़ीं घर में महा-विलाप मचा, महा रुदन करतीं और कहती जाती हैं, भानुमति ने अपने सुहाग को अचल कर लिया, पति से पहले स्वर्गधाम को चली गई है, धन्य है यह पति पतिव्रत भाव और धन्य है यह पति का प्रेम। यदि स्वर्ग कोई वस्तु है तो सचमुच ऐसे ही नेक और प्रेम भक्ति वाले प्राणियों का भाग है।

सोना काई नहिं लगे, लोहा घुन नहीं खाय।
बुरा भला जो हरि भक्त, कबहूं नर्क न जाय॥

किसी २ को सन्देह हुआ कि भानुमति ने विष खाकर आत्मघात कर लिया, परन्तु डाक्टर ने कहा—नहीं हृदय की धड़कन बन्द होने से इस की मृत्यु हुई है।

१६—मैनावती।

यह जग कोठी आग की, चहुं दिग लागी आग
भीतर रहे सो जल मरे, साधु उभरे भाग॥
क्या मुख ले हंस बोलिए, नयनों बरसत नीर
दिना चार का खेल यह, क्यों भर में कोई धीर
राम नाम की टेर कर, तज दे विषय विकार।
काश्च छोड़ कर वावो गहि, ले कञ्चन सार॥
शूली ऊपर घर किया, विष का किया आहार।
काल विचारा क्या करे, आठ पहर हुशियार।
सत्य नाम से लौ लगी, झूठा वाद विवाद।
अविनाशी पिव पाइया, सुरत भई विस्माद॥

महारानी मैनावती गौड़ देश के महाराज त्रैलोक्यच
की रानी थीं, उस राजा की राजधानी कांचनपुर में थी, मै
वती देवी रङ्ग की गोरी शरीर की ठमकी हंसमुख, सुश
और बुद्धिमती है, जैसे मानसरोवर की झील को राज हं
नियों से शोभा मिलती है, वैसे ही मैनावती भी गौड़ देश प
आभूषण बनी हुई थी।

जन्म मरण दुःख याद कर कूडे काम विसार।
जिन २ पन्थों चालना, सोई पन्थ संवार॥
जेहि घट प्रीत न प्रेम रस, पुनि रसना नहीं नाम।
ते नर पशु संसार में, उपज मरे वेकाम॥
सत्य नाम जाना नहीं, लागी मोटी खोर।
काया हांडी काट की, न वह चढ़े बहोर॥
कहा किया हम आय के, कहा करेंगे जाय।
इत के भये न उत के चाले मूल गंवाय॥
कबीर यह तन जात है सके तो ठौर लगाय।
कै संग्रत कर साध की के हरि के गुणगाय॥

रानी चौंक पड़ी इस भजन ने उसके मन को हिला दिया उस ने आंसू उठा कर देखा, सामने एक साधु आ रहा है। साथ में दो चार चेले थे, एक चेला आनन्द में मग्न होकर भजन गा रहा है। जिस का आशय उपरोक्त पदों के तुल्य है, रानी सचिन्त हुई, वह सोचने लगी मुझ को क्या करना चाहिए, पदों में इस के प्रश्नों का उत्तर वर्तमान था।

कबीर यह तन जात है सके तो ठौर लगाय।
कै सेवा कर साध की के हरि के गुणगाय।

इस का मन आनन्द से भर गया, ईश्वर ने भजन के

मैनावती को वैराग्य हो गया, वह लोक से विरक्त हो गई और रात दिन चिन्ता में व्यस्त रहने लगी, सब लोग उस को समझाने आते थे, धैर्य देते थे। परन्तु मैनावती उन बातें सुनकर मौन रहती थी, किसी को कुछ उत्तर नहीं देती थी, वह जानती थी कि मनुष्य को शान्तिप्रद बातों से किसी अंश में धैर्य्य होजाता है।

अस्तु परिणाम यह हुआ, कि जब से राजा मर गए उस ने घरबार के काम से अपना मन हटा लिया और रात दिन ईश्वरोपासना में मग्न रहने लगी।

एक दिन वह महल के झरोखे में बैठी हुई सोच रही थी, कि यह लोक भी विचित्र स्थान है इस में क्षण प्रतिक्षण परिवर्त्तन होता रहता है कभी सांझ कभी भोर जीवन का परिणाम मृत्यु है, जो आज सुखी है, कल को दुःखी होंगे जो फूल आज खिला है कल मुरझा जायेगा, दिन के पश्चात रात यौवन के पश्चात् वृद्धावस्था आती है। यह सब कुछ होता है, फिर भी मनुष्य संसार के बन्धन में फंसा रहता है।

रानी इस प्रकार के विचार में व्यस्त थी, उस को ज्ञात नहीं हुआ, कब दिन चढ़ा और कब अस्त हुआ, न कुछ अपने तन मन की सुरत थी, जब वह इस धुन में व्यस्त थी, तो उस के कान में भनक पड़ी जैसे कोई दुतारा छिप गा रहा है।

जन्म मरण दुःख याद कर कूड़े काम विसार।
जिन २ पन्थों चालना, सोई पन्थ संवार॥
जेहि घट प्रीत न प्रेम रस, पुनि रसना नहीं नाम।
ते नर पशु संसार में, उपज मरे वेकाम॥
सत्य नाम जाना नहीं, लागी मोटी खोर।
काया हांडी काट की, न वह चढ़े बहोर॥
कहा किया हम आय के कहा करेंगे जाय।
इत के भये न उत के चाले मूल गंवाय॥
कबीर यह तन जात है सके तो ठौर लगाय।
कै संगत कर साध की के हरि के गुणगाय॥

रानी चौंक पड़ी इस भजन ने उसके मन को हिला दिया इस ने आंख उठा कर देखा, सामने एक साधु आ रहा है। साथ में दो चार चेले थे, एक चेला आनन्द में मग्न होकर भजन गा रहा है। जिस का आशय उपरोक्त पदों के तुल्य है, रानी सचिन्त हुई, वह सोचने लगी मुझ को क्या करना चाहिए, पदों में इस के प्रश्नों का उत्तर वर्तमान था।

कबीर यह तन जात है सके तो ठौर लगाय।
कै सेवा कर साध की के हरि के गुणगाय।

इस का मन आनन्द से भर गया, ईश्वर ने भजन के

मैनावती को वैराग्य हो गया, वह लोक से विरक्त ह
गई और रात दिन चिन्ता में व्यस्त रहने लगी, सब लोग उ
को समझाने आते थे, धैर्य देते थे। परन्तु मैनावती उन क
बातें सुनकर मौन रहती थी, किसी को कुछ उत्तर नहीं देत
थी, वह जानती थी कि मनुष्य को शान्तिप्रद बातों से किस
अंश में धैर्य्य होजाता है।

अस्तु परिणाम यह हुआ, कि जब से राजा मर गया
उस ने घरबार के काम से अपना मन हटा लिया और रात
दिन ईश्वरोपासना में मग्न रहने लगी।

एक दिन वह महल के झरोखे में बैठी हुई सोच रही
थी, कि यह लोक भी विचित्र स्थान है इस में क्षण प्रतिक्षण
परिवर्त्तन होता रहता है कभी सांझ कभी भोर जीवन का
परिणाम मृत्यु है, जो आज सुखी है, कल को दुःखी होंगे,
जो फूल आज खिला है कल मुरझा जायेगा, दिन के पश्चात्
रात यौवन के पश्चात् वृद्धावस्था आती है। यह
कुछ होता है, फिर भी मनुष्य संसार के
रहता है।

रानी इस प्रकार के विचार में
नहीं हुआ, कब दिन चढ़ा और
अपने तन मन की सुरत थी, जब
तो उस के कान में मनक पड़ी
रहा है।

उन्होंने गोपीचन्द से कहा—उसे क्रोध आगया, राधा ...िप कर उसे उत्तेजित करने में भाग लिया ।

एक दिन रात के समय जब गोपीचन्द महल में आया तो ...ने कहा-प्राणनाथ! यह क्या बात है, जो सास के विषय ...तिदिन सुनती हूं, आप इस की ओर कुछ ध्यान नहीं ...और जब बात बिगड़ जायेगी तो आपको पछताना पड़ेगा। ...चिन्द अपनी माता को देवी समझता था, परन्तु नित्य २ ...पारोप ने इस के मन में संशय उत्पन्न कर दिया उस ने ...ने विचार किया, कदाचित् यह अभियोग सच्चा हो तथापि ...विषय में माता से वार्त्तालाप करना अनुचित समझ ...न्धर के पास अचानक चला गया।

योगी उस समय समाधि की दशा में था, उस को राजा ...आने का कुछ पता नहीं लगा, राजा ने उस को उठा कर ...गढ़े में डाल दिया और मिट्टी से बन्ध कर दिया, उस ने ...झा बदनामी से बचने का इससे बढ़कर और कोई उपाय ...। न रहे बांस ना बजे बंसी और लौट कर महल में सो ...।

...दिन चढ़े नियत समय पर मैनावती आई पर जालन्धर ...ां नहीं था, उस के अन्य शिष्य दो पहले ही से जा चुके ...रानी को दुःख हुआ, पर सोचा साधु थे, एक स्थान पर ...धिक दिन वास करना अनुचित समझा होगा, इस लिए

द्वारा इस को उपदेश दिया और इस को आगामी
प्रकृत सूचना मिल गई।

वह झरोखे से नीचे आई, दासी को भेज कर
को बुलाया, वह जालन्धर साधु था, जो उस समय का
बड़ा योगी और प्रसिद्ध ज्ञानी था, इसी के शिष्यों में
नाथ, भर्तृ आदि बड़े २ महात्मा हुए हैं, जालन्धर के आने
पर रानी ने उस का बड़ा सन्मान किया, रनिवास की अन्य
रानियां भी इस के दर्शन के लिए आईं और साधु का उपदेश
सुन कर प्रसन्न हुईं।

मैनावती ने साधु के रहने के लिए एक विशेष स्थ
नियत कर दिया, जहां वह सबको उपदेश देता था, रनिवा
की अन्य रानियां भी कभी २ आती थीं, मैनावती अधि
समय साधु के सत्सङ्ग और उस के उपदेश में व्यतीत करत
थोड़े ही दिनों में जालन्धर के उपदेश से रानी का दुःख दू
हो गया। अब वह आत्मिक-तत्वों पर अधिक विचार करने
लगी।

यह संसार विचित्र है, कोई हजार अच्छा हो, किन्तु
लोगों के दोषारोप से नहीं बच सकता। क्योंकि स्वार्थी नीच
आत्माओं का स्वभाव ही ऐसा होता है। गोपीचन्द्र की चार
रानियां थीं। उमा, कौमुदा, सुलक्षणा, रिसोका, राजा इन के
प्रेममें डूबा हुआ था, जालन्धर के अधिक ठहरने से दासियों
ने उन के कान भरने आरम्भ किए।

शीश चूम कर कहा-मेरे नेत्र के तारे! मुझको कोई नहीं दुःख है। आज प्रभात से तरह २ के विचार मेरे मन में उठते हैं, सो इस समय तुझ को देख कर तेरे पिता का स्मरण हुआ, किसी समय उसकी आयु में ऐसा ही उत्सव मनाया जा रहा था। परन्तु उसका परिणाम क्या हुआ, पुत्र! यह संसार वृक्ष है, हम लोग इस पर पक्षी बन कर बसेरा करते लेते हैं, जहां प्रभात हुई, कोई कहीं कोई कहीं चला जाता है। यह संसार के सुख का परिणाम है। यहां कोई दशा स्थिर नहीं रहती इस लिये परमात्मा को कभी न भूलना चाहिये, कौन जाने किस समय क्या हो जाय, बुरा कर्म कदापि न करना चाहिये, क्योंकि उसका दण्ड नियत है, ईश्वर किसी को कर्म फल दिए बिना नहीं छोड़ता, चाहे राजा हो या प्रजा, धनी हो वा निर्धन कर्म फल अवश्य पाता है॥

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा।
जो जस कीन सो तस फल चाखा॥

इस लिए हम सब को फूक २ कर पग धरने और सोच २ कर काम करने की आवश्यकता है॥

पुत्र! तेरा पिता स्वर्ग-धाम को चल बसा, ईश्वर ने अपनी दया से एक साधू को भेजा था, मेरी इच्छा थी तू भी किसी दिन उसके सत्संग से लाभ उठाता पर दैवयोग से वह भी कहीं को चल बसा और मैं अच्छी तरह उसके उपदेश से लाभ न उठा-

यह सोच कर वह मौन हो अपने मन्दिर में बैठ रहे इसे क्या खबर थी कि स्वयं इस के बेटे ने जालन्धर को दिया है।

जिस दिन यह घटना हुई उसी दिन गोपीचन्द्र का जन्मोत्सव था, राज्य में सब जगह उत्सव मनाया जा रहा था महल में भी तरह २ की तय्यारियां हो रही थीं, जिस झरोखे में रानी बैठी हुई थी, उस के तले गोपीचन्द्र के शरीर में केशर का उबटन मला जा रहा था। यह स्वर्ण सिंहासन पर बैठा था, रानियां खड़ी थीं, बहुत सी स्त्रियां मङ्गल गा रही थीं।

रानी की दृष्टि गोपीचन्द्र पर पड़ी, यह अपने पिता के अनुरूप था, रानी के दिल में त्रैलोक्यचन्द्र की याद आई, उस का दुःख ताज़ा हो गया। कुछ योगी के गुप्त होने और कुछ पति वियोग के दुःख से तप्त आंसू बह चले और गोपीचन्द्र के ऊपर आपड़े उस ने चकित होकर ऊपर देखा तो माता रोती हुई दृष्टिगत हुई, माता के प्रेम का उसे बड़ा ध्यान रहता था, गाना बन्द करा दिया और उसी अवस्था में माता के पास जा पांव छूकर कहने लगा—माता! आज इस मङ्गल के दिन तुझ को क्या दुःख पहुंचा, मेरे जीते जी तेरा दुःखी होना मुझे लज्जित करता है, नगर में सब जगह मंगल हो रहा है, परन्तु माता रो रही है, इस का क्या कारण है।

गोपीचन्द्र रानी का इकलौता पुत्र था, उस ने बेटे का

मेथ्या मोह से तू बचा रहेगा। अब खुशी २ उत्सव मना।

गोपीचन्द मां के चरण छूकर चला आया, वह चाहता ा कि सारा वृत्तान्त माता को सुना दे पर लज्जा से ऐसा हुप रहा, मानो किसी ने उस का मुंह बन्द कर रक्खा था। ां को क्या पता था कि स्वयं मेरा बेटा गुरु का मारने ाला है।

राजा नीचे आया। उत्सव के दिन और सब खुश थे, ारन्तु राजा स्वयं उदास था। रात को नींद न आती थी, न हर समय व्याकुल रहता था, उमा के वचन विष के ुल्य लगते थे। राजकार्य्य भार ज्ञात होता था।

जालन्धर को गड़े हुए कई दिन हो गए, राजा और ैनावती दोनों को चिन्ता रहती थी, राजा प्रायः माता के ास जाया करता था और उस की आह्ल उब उबाई रहती थी, पर मैनावती ने कभी ध्यान नहीं किया, उसे सन्देह भी नहीं था, कि गोपीचन्द से ऐसी बात हो सकती है। वह देवी थी, अनुचित विचार उस के पास नहीं फटकते थे।

दो तीन दिन पीछे जालन्धर का शिष्य गोरखनाथ राज-धानी में आया, परन्तु गुरु का कहीं पता न लगा, इस को सन्देह हुआ कि किसी ने गुरु को हानि न पहुंचाई हो अस्तु पता लगा कि रनिवास की रानियां गोपीचन्द के कान भरा करती थीं। उस [illegible] —"हो न हो गोपीचन्द ने उसे वध कर दिया [illegible] लिए बहुत से चेलों का दल लेकर [illegible]

सकी। अच्छा मुझे उस साधु का इतना ध्यान नहीं, जितन
तेरा है। साधु का एक जगह रहना भी उचित नहीं, परन्तु
तुझ को हरिभक्त बनाना चाहती हूं। जिस में मेरी कोख पवि
हो, यह रूप, यौवन, धन थोड़े दिन का है, आज है, कल न
रहेगा, इसी में आयु व्यय करना उचित नहीं, यही विचार थ
जो इस समय मेरे मनमें पैदा हुआ और तेरे पिता के स्मरण
ने मुझको तड़फा दिया, मैं विवश हो प्रेम आंसू थाम न सकी
अश्रुपात हो ही गए।

गोपीचन्द का हाल कुछ न पूछो माता की बातों ने कलेजे
में छिद्रकर दिया, चोरकी दाढ़ी में तिनका, वह पहले ही अपनी
माता को देवी जानता था अब और भी विश्वास होगया पर
क्या करता तीर हाथ से कमान से निकल चुका था। आशा
नहीं कि जालन्धर मिट्टी तले जीवित हो। वह इस सती के
पांव पर गिर पड़ा, हे माता जी! मैंने बड़ा अपराध किया, मैं
पुत्र धर्म से गिर गया, मेरा पाप ईश्वर कैसे क्षमा करेगा, तू
मुझको क्षमा कर नहीं तो मैं नर्क में जाऊंगा॥

माता ने पुत्र को छाती से लगा लिया और कहा-पुत्र! मां
को कभी बेटे का दोष नहीं दीखता, एक क्या तेरे हज़ार अपराध
क्षमा हैं। तू देवता का लड़का है त्रैलोक्यचन्द्र की निशानी
और मेरा कलेजा मेरी आंखका तारा मैं तुझ से कभी नाराज़
नहीं हूं, मेरा सुख तो चला गया, मैं तेरे जन्म उत्सव के पीछे
[illegible]

सकी। अच्छा मुझे उस साधु का इतना ध्यान नहीं, जित तेरा है। साधु का एक जगह रहना भी उचित नहीं, परन्तु तुझ को हरिभक्त बनाना चाहती हूं। जिस में मेरी कोख पवि हो, यह रूप, यौवन, धन थोड़े दिन का है, आज है, कल रहेगा, इसी में आयु व्यय करना उचित नहीं, यही विचार जो इस समय मेरे मनमें पैदा हुआ और तेरे पिता के स्मर ने मुझको तड़फा दिया, मैं विवश हो प्रेम आंसू थाम न सक अश्रुपात हो ही गए।

गोपीचन्द का हाल कुछ न पूछो माता की बातों ने कलेजे में छिद्रकर दिया, चोरकी दाढ़ी में तिनका, यह पहले ही अपनी माता को देवी जानता था अब और भी विश्वास होगया पर क्या करता तीर हाथ से कमान से निकल चुका था। आशा नहीं कि जालन्धर मिट्टी तले जीवित हो। यह इस सती के पांव पर गिर पड़ा, हे माता जी! मैंने बड़ा अपराध किया, मैं पुत्र धर्म से गिर गया, मेरा पाप ईश्वर कैसे क्षमा करेगा, तू मुझको क्षमा कर नहीं तो मैं नर्क में जाऊंगा ॥

माता ने पुत्र को छाती से लगा लिया और कहा-पुत्र! मां को कभी बेटे का दोष नहीं दीखता, एक क्या तेरे हज़ार अपराध क्षमा हैं। तू देवता का लड़का है त्रैलोक्यचन्द्र की निशानी और मेरा कलेजा मेरी आंखका तारा मैं तुझ से कभी नाराज़ नहीं हूं, मेरा पुत्र तो चला गया, मैं तेरे अन्न उत्ताप के पीछे स्वयं तुझ को सत्संग कराती रहूंगी, जिस से सांसारिक

सकी। अच्छा मुझे उस साधु का इतना ध्यान नहीं, जितना तेरा है। साधु का एक जगह रहना भी उचित नहीं, परन्तु मैं तुझ को हरिभक्त बनाना चाहती हूं। जिस में मेरी कोख पवित्र हो, यह रूप, यौवन, धन थोड़े दिन का है, आज है, कल न रहेगा, इसी में आयु व्यय करना उचित नहीं, यही विचार था जो इस समय मेरे मनमें पैदा हुआ और तेरे पिता के स्मरण ने मुझको तड़फा दिया, मैं विवश हो प्रेम आंसू थाम न सकी अश्रुपात हो ही गए।

गोपीचन्द का हाल कुछ न पूछो माता की बातों ने कलेजे में छिद्रकर दिया, चोरकी दाढ़ी में तिनका, वह पहले ही अपनी माता को देवी जानता था अब और भी विश्वास होगया पर क्या करता तीर हाथ से कमान से निकल चुका था। आशा नहीं कि जालन्धर मिट्टी तले जीवित हो। वह इस सती के पांव पर गिर पड़ा, हे माता जी ! मैंने बड़ा अपराध किया, मैं पुत्र धर्म से गिर गया, मेरा पाप ईश्वर कैसे क्षमा करेगा, तू मुझको क्षमा कर नहीं तो मैं नर्क में जाऊंगा॥

माता ने पुत्र को छाती से लगा लिया और कहा-पुत्र! मां को कभी बेटे का दोष नहीं दीखता, एक क्या तेरे हज़ार अपराध क्षमा हैं। तू देवता का लड़का है त्रैलोक्यचन्द्र की निशानी और मेरा कलेजा मेरी आंखका तारा मैं तुझ से कभी नाराज़ नहीं हूं, मेरा गुरु तो चला गया, मैं तेरे जन्म उत्सव के पीछे स्वयं तुझ को सत्सङ्ग कराती रहूंगी, जिस से संसारिक

सकी। अच्छा मुझे उस साधु का इतना ध्यान नहीं, जितना तेरा है। साधु का एक जगह रहना भी उचित नहीं, परन्तु मैं तुझ को हरिभक्त बनाना चाहती हूं। जिस में मेरी कोख पवित्र हो, यह रूप, यौवन, धन थोड़े दिन का है, आज है, कल न रहेगा, इसी में आयु व्यय करना उचित नहीं, यही विचार था जो इस समय मेरे मनमें पैदा हुआ और तेरे पिता के स्मरण ने मुझको तड़पा दिया, मैं विवश हो प्रेम आंसू थाम न सकी अश्रुपात हो ही गए।

गोपीचन्द का हाल कुछ न पूछो माता की बातों ने कलेजे में छिद्रकर दिया, चोरकी दाढ़ी में तिनका, वह पहले ही अपनी माता को देवी जानता था अब और भी विश्वास होगया पर क्या करता तीर हाथ से कमान से निकल चुका था। आशा नहीं कि जालन्धर मिट्टी तले जीवित हो। वह इस सती के पांव पर गिर पड़ा, हे माता जी! मैंने बड़ा अपराध किया, मैं पुत्र धर्म से गिर गया, मेरा पाप ईश्वर कैसे क्षमा करेगा, तू मुझको क्षमा कर नहीं तो मैं नर्क में जाऊंगा॥

माता ने पुत्र को छाती से लगा लिया और कहा-पुत्र! मां को कभी बेटे का दोष नहीं दीखता, एक क्या तेरे हज़ार अपराध क्षमा हैं। तू देवता का लड़का है त्रैलोक्यचन्द्र की निशानी और मेरा कलेजा मेरी आंखका तारा मैं तुझ से कभी नाराज़ नहीं हूं, मेरा गुरु तो चला गया, मैं तेरे जन्म उत्सव के पीछे स्वयं तुझ को सत्सङ्ग कराती रहूंगी, जिस से संसारिक

यहां से चली जाय मैं स्वयं गुरु की खोज करूंगी और गौड़ नरेश इस काम में सहायता करेगा।

रानी की बातों में जादू का प्रभाव था. गोरखनाथ ने चेलों को चले जाने की आज्ञा दी।

रानी अपने पुत्र का कर पकड़ कर महल में लाई, और उस से जालन्धर का वृत्तान्त पूछने लगी। गोपीचन्द ने माता से सारा वृत्तान्त साफ २ कह दिया, रानी को बड़ा अचम्भा हुआ, उस ने तुरन्त गढ़े की मिट्टी खुदवाई जालन्धर उस के अन्दर से बहुत बुरी दशा में निकला शरीर मुर्दह के तुल्य हो-गया था, रानी ने मस्तिष्क पर हाथ फेरा तो कुछ २ उष्णता बाकी थी।

उस ने आनन्द के साथ कहा—गुरु मरे नहीं जीते हैं और समाधि की दशा में हैं। वहां से महल में लाई खो-पड़ी पर गीले आटे की रोटी रक्खी गई और चेतन करने के और उपाय भी किए गए। जालन्धर ने नेत्र खोल दिए सब को आनन्द हुआ, गोरखनाथ भी आगया और सब प्रसन्न होकर कहने लगे बड़ी कुशल हुई।

जब जालन्धर को सारा वृत्तान्त सुनाया गया, वह बहुत दुःखी हुआ गोरखनाथ कहने लगा—इस अपराधी को कुछ दण्ड देना चाहिए। इतने में रानी पुत्र का हाथ पकड़े हुए आ गई और गुरु के चरणों में सिर झुका कर कहने लगी—महाराज! संसार में कौन अपराधी नहीं है?

गोरखनाथ भी पहुत प्रसिद्ध हो चुका था, इस ने ठान ली थी कि गुरु का पता न लगा तो राजा को दण्ड दूंगा, उस के आने से और लोग भी एकत्र हो गए। उस के साथी चेले बड़े क्रोध में थे, प्रजा के मन में भी क्षोभ हुआ और सब चाहते थे कि किसी प्रकार घातक का पता लगे। यह दशा देख कर राजा बाहर निकला, परन्तु उस के निकलने से भी लोगों की चिल्लाहट और पुकार बन्द न हुई और इस काल में सारे नगर में यह बात फैल गई कि जालन्धर के गुप्त होने के कारण विद्रोह होने वाला है, यह चर्चा मैनावती ने भी सुनी और यह भी सुना कि जालन्धर का घातक स्वयं राजा है। व उसी समय राजमन्दिर से बाहर निकली।

महल के सामने ठकाठक जमा था कहीं तिल धरने के जगह न थी। यथार्थता को जानने के इच्छुक थे। राजा बीच में खड़ा था और गोरखनाथ उस से यह कह रहा था कि गुरु तेरी राजधानी में गुप्त हुए हैं, उन को खोजना तेरा काम है। अभी राजा ने इस बात का कुछ उत्तर नहीं दिया था, सब आश्चर्य से उस की ओर देख रहे थे, सम्भव था कि सैनिक गण सब को हटा देते, किन्तु उसी समय एक स्त्री श्वेत वस्त्र धारण किए भीड़ को चीरती हुई यहां आ पहुंची।

उस ने गोरखनाथ से कहा--जिस तरह तू गुरु का पुत्र है, इसी तरह मैं उस की पुत्री हूं, उचित है, यह सब भीड़

गोपीचन्द ने कहा--महाराज ! मैं अपराधी उपस्थित हूं।

जालन्धर ने मुस्करा उस के सिर पर हाथ फेरा और कहा—राजा तेरा अपराध क्षमा किया गया। जिस ख्याल से तैने अपराध किया था, यह मनुष्य जीवन का एक दुर्बल अंग है। मैनावती के पुत्र ! जा खुशी से राज कर और अपनी माता की पूजा करता रह यह देवी है और तेरे पूजने योग्य है

गोपाचन्द ने कहा—महाराज ! जिस दिन मैंने अपराध किया उसी दिन माता ने मुझ को उपदेश दिया, इस लिए मैं उस के बदले अपने प्राण आप को देने के लिए हाज़िर हूं। इस को स्वीकार कीजिए यदि न करेंगे तो मेरा जीवन दुःख और शोक में कटेगा।

जालन्धर ने समझा गोपीचन्द साधु बनना चाहता है, इसलिए पहले उसने गोपीचन्द को बहुत कुछ समझाया। परन्तु जब ज्ञात हुआ कि वह इस बात पर उद्यत है और इसी में उसका सच्चा कल्याण है कि उसे शिष्य बना लिया जाय तो विधि पूर्वक उसे दीक्षित किया और राजसी वस्त्र उतार कर हाथ में कमण्डल, गले में सेला पहना दी और कहा—पुत्र ! प्रथम रनिवास से भिक्षा मांग कर ले आ जिस-में राज का घमण्ड तेरे मन से दूर हो जाय।

सारे नगर में यह बात प्रगट हो गई कि राजा साधु हो गया। कुछ देर में वह साधु भेष किए, कमण्डल लिए, झोली गले में डाल अपनी पटरानी उमा के द्वार पर आया, और

विद्या तुझ को प्राप्त हो और तू अपनी पैतृक सम्पत्ति को लाभ कर तू मेरा पुत्र नहीं धर्म का पुत्र है, धर्म तेरी रक्षा करे और तू धर्मराज बने।

उत ते कोई न आइया, जासे पूछूं धाय।
इत ते सब कोई जात है, भार लदाय लदाय॥
उत का सतगुर भेद दें, जिनकी मति बुधि धीर।
भवसागर के जीव को, काढ़ि लगावे तीर॥
जाव पुत्र उस देश को, जहां बारह मास वसन्त।
कुमुद खिल विकशो कमल, खग मृग केल करन्त॥
जाव पुत्र उस देश को, जहां न पवन आकाश।
प्रेम रूप बनि प्रेम में, निशि दिन करो निवास॥
जाव पुत्र उस देश को, जहां न कष्ट क्लेश।
चित्त दे श्रद्धा से सुनो, सतगुरु का उपदेश॥
जाहि न बुधि चित लख सके, मन इन्द्रिन सों पार।
जाव पुत्र उस देश को, लहो आनन्द अपार॥
भूप दुःखी अवधू दुःखी, दुःखी रङ्क विपरीत।
कहैं कबीर यह सब दुःखी, सुखी सन्त मन जीत।
लेना हो सो जल्द ले, कही सुनीं मत मान।
कही सुनी युग २ चली, आवागमन बन्धान॥

माता से विदा हो राजा ने मन्त्रियों के यहां भिक्षा मांगी, फिर अपने मामा भर्तृहरि की तरह राज्य से पृथक हो दूसरी जगह चला गया और शेष आयु ईश्वर स्मरण में व्यतीत की।

मैनावती पुत्र के जाने के पश्चात् अत्यन्त तपस्या और पवित्रता का जीवन व्यतीत करने लगी और कुछ दिन में इस शरीर को परित्याग कर दिया, यह उस धार्मिका का संक्षिप्त वृत्तान्त है।

१७—विहूला।

भक्ति भाव भादों नदी, सभी चले अकुलाय।
सरिता सोई सराहिये, जो आठ मास ठहराय॥
जलज्यु प्यारी माछली, लोभी प्यारा दाम।
माता प्यारा बालिका, भक्ति प्यारी राम॥
सीस उतार भुंई धरे, तापर राखे पांव।
दास कबीरा यूं कहे, ऐसा होय तो आंव॥
प्रेम पियाला भर पिया, राच रहा गुर ज्ञान।
दिया नकारा शब्द का, लाल खड़े मैदान॥

जिऊं तो पिया के सङ्ग रहूं, मरत न छाड़ूं सङ्ग।
पिया रङ्ग राती रात दिन, कबहूं न होऊं कुरङ्ग॥

मढ़ुनी नगर में सायन नामक एक व्यापारी रहता पिङ्गला उस की उत्तम कन्या थी, इस की माता का अमला सुन्दरी था, इस बात के कहने की आवश्यकता कि यह नेक धर्मात्मा सची और सुशीला स्त्री थी, क्योंकि सदा ऐसे ही प्राणियों के जीवन चरित्र आप को सुन चाहते हैं जो श्रेष्ठ और धार्मिक हों।

सायन के घर में महाभारत की कथा हो रही। पिङ्गला अपनी माता के साथ कथा सुना करती थी, जब उ ने दमयन्ती और सावित्री के वृत्तान्त सुने तो उस की आं से आंसू बह चले और वह माता से बोली "मैं भी सावि की तरह पतिपरायण हूंगी"।

माता ने कहा—बेटी! स्त्री-जाति का आदर्श यही है कि पति की सेवा करे। यह तन, मन, धन, सब पति का है, पति के बिना संसार में जीना व्यर्थ है। संसार का सुख केवल पति के साथ है। लड़के, बाले, धन दौलत, सब कुछ पति से मिलते हैं। इस लिए सावित्री ने किसी दशा में भी पति का सङ्ग नहीं छोड़ा और इस लोक में अपने पश्चात् उज्ज्वल कीर्ति छोड़ गई।

यह बात माता ने सरलता से कही थी, लोग रोज अपने घरों में कहा सुना करते हैं। परन्तु पिङ्गला अधिका-

सबने उसको समझाया सास ने गोदी में लेकर ढारस देना चाहा, हाथ से आंसू पोंछे पर इसके हृदय में धैर्य न हुआ। यह अपनी सास से कहने लगी मेरी माता ने कहा था परिश्रम वृथा नहीं जाता।

करे प्रयत्न मनुष्य जो, ईश्वर होय सहाय।

सावित्री ने अपने पति को जीवित कराया था मेरा पति मरा नहीं, केवल सर्प का विष है, सर्प काटे की छः मास आश रहती है। अस्तु मैं पति की लाश लेकर निकलूंगी कोई तो जानकार मिलेगा, यदि वह जी उठा तो लौट कर आऊंगी नहीं तो मैं भी उसी के साथ मरूंगी।

दृढ़ इच्छा को कौन रोक सकता है, जो किसी धुन में लग जाते हैं वह बावले हो जाते हैं, उन की सोच विचार की सारी शक्ति एक ही बिन्दु पर एकत्र होजाती है, न किसी की सुनते हैं, न किसी की मानते हैं अपनी धुन के इतने पक्के होते हैं कि साधारण जन उन कि विलक्षण गति को समझ नहीं सकते और कहते हैं बावले से बच कर रहो मार बैठेगा

बिहुली की भी यह दशा हो गई, उस कोमलाङ्गी ने पति की लाश को पीठ पर लाद लिया और गङ्गा के किनारे आई उस के ससुर की छोटी सी नाव बन्धी थी। लाश को धीरे से उस पर रख दिया और नाव की रस्सी खोल कर आप भी चढ़ बैठी, शरीर पर आभूषण कोई न था, न कोई सुन्दर वस्त्र था, बाल खुले, मुख मलीन, भाग्य भारोसे एक ओर को चल

उस ने कहा—जीते जो इन का साथ दिया, यदि मौत में न दिया तो सम्बन्ध कैसा ?

सायन ने कहा—अच्छा कुछ दिन यहां सुस्ता ले फिर चली जाना।

उसने कहा—मुझे अपने घर में न बुलाओ। मैं पापिनी हूं, मैं किसी को क्या मुख दिखाऊं घर द्वार जिस का था, वह चल बसा मैं इस लाश को न छोड़ूंगी, नौका से बाहर निकलना अधर्म है। माता ने मुझे सावित्री की कथा सुनाई थी, कि स्त्री का यही धर्म है कि पतिपरायण हो, मैं तो दुःखी हूं तुम को क्यों दुःखी करूं। समझ लो विहुला मर गई। यदि किसी ने पति को अच्छा कर दिया तो लौट कर फिर आऊंगी नहीं तो अपने भी प्राण त्यागूंगी।

अभी यह बात समाप्त नहीं हुई थी, कि प्रबल वायु नाव को बहा कर मंझधार में ले गई, माता पिता चिल्लाते रह गए, प्यारी विहुला ! क्या तू सचमुच हमारी गोद खाली कर जाएगी।

उस ने यह शब्द सुने पर नाव शीघ्रता से चल रही थी, पति प्रेम में माता पिता के रुदन पर ध्यान न दिया वह निराश होकर घर लौट गए और देर तक रोते रहे।

वायु प्रचण्ड थी छोटी नौका को ले उड़ी। गङ्गा की लहरें आकाश को छूती थीं, विहुला की क्या शक्ति कि नौका थाम रखती इतने में काली घटाएं भी उमण्ड आईं चारों

दौर्भाग्य ने यह दिन दिखाया, कि एक केवट इस प्रकार के अनुचित शब्द कह रहा है। दौर्भाग्य पर किसी का क्या वस है, जी में सोचा मौन साध रहूं। परन्तु दशा और थी, मल्लाह ने उस के प्राण बचाए थे, इस ने सिर उठाकर कहा-भाई! तू क्या कहता है ऐसी बात मुंह से न निकाल, मैं सावित्री हूं। इस तरह अनुचित बात मुझ को अच्छी नहीं लगती

मल्लाह ने सोचा यह बातों से न मानेगी, इस को नाव से अलग करना चाहिए, इस इरादा से दुष्ट उस की ओर बढ़ा, बिहुला डरी ऐसा न हो, पति से अलग की जाऊं, इस समय कोई सहायक नहीं था। उस ने आकाश की ओर हाथ उठाकर कहा—प्रभु! जहां किसी का सहारा नहीं, होता वहां तुम सहारा देते हो अब देर करने का समय नहीं, इस की आखें भर आईं। मांझी ने डोंगी को रस्सी के द्वारा अपनी ओर खींच लिया और चाहा कि उस पर चढ़ जाय इतने में वायु प्रचण्ड हुई रस्सी टूट गई दुष्ट नदी में गिर पड़ा और बहता २ किसी घाट पर जा लगा।

दुःख एक ओर से नहीं किन्तु चहुं दिग् से आता है। घाट पर एक कहार मछली पकड़ने के निमित्त बैठा था, बिहुला की नौका भी वायु उसी घाट पर बहा ले गई थी। इस ने सती को देखा यह भी केवट की तरह पापी बन उसी तरह की बातें करने लगा, सती ने इस के उत्तर में कहा—तू मेरा पिता है। तुझे ऐसी अनुचित बात मुख से न निकालनी

नौका लगी हुई है, एक जन म्हा धो रहा था इस ने अद्भुत समझ जिज्ञासा की तुम्हारे ग्राम में किसी के पास सर्प उसे कि औषधि भी है, यह स्वयं वैद्य था, कहने लगा हम अच्छा कर सकते हैं, परन्तु तुम इसे यहां रख कर मेरे घर पर चलो वहां से दवा ले आओ इस ने ध्यान पूर्वक उस की ओर देख कर कहा :—

> जा कारण घर छांड़ियां, घूमी देश विदेश ।
> सो पति कैसे त्यागिये, यह अति कठिन क्लेश ॥

मैंने इस नाव से उतरने की शपथ खाई है, यदि अच्छा होना होगा तो इसी पर हो जायेगा नहीं तो हमं दोनों की इति श्री होगी।

वैद्य ने कहा—तू आत्मघात करना चाहती है, यह पाप है, राजा सुनेगा तो दण्ड देगा, तू नाव से उतरेगी तो मैं बल से ले जाऊंगा, राजा मेरा मित्र है, उचित है मेरे साथ चल।

सती बोली—राजा का भय चोर को होता है, मैंने कोई अपराध नहीं किया यह मुझे क्यों दण्ड देगा।

यह सुन कर वैद्य ने चाहा कि बलात् उसे उतारले, इस ने उच्च-स्वर से रोना आरम्भ किया जिस से और जन एकत्र हो गए, विदुषी ने उस की दुष्टता का वृत्तान्त सब को सुनाया सब उसे धिक्कारने लगे इस यात्रा में यह उस की अन्तिम विपद् थी, यहां से चल कर सती सङ्गमघाट त्रिवेणी

विहुला को देख कर कहने लगीः—बेटी! तू कौन है? तेरा विलाप सुन कर मेरी छाती फटी जाती है।

इस ने उत्तर दिया—माता! स्वामी को सर्प डस गया मैं अकेली इस के शरीर को लेकर तरह २ के दुःख सहती हुई यहां आई हूं कोई वैद्य नहीं मिलता जो इन्हें अच्छा करे मार्ग में दुष्टों ने बहुत सताया अब मैं निराश होकर अन्तिम समय ईश्वर से प्रार्थना करती हूं कि पति के साथ मुझको भी मृत्यु दे।

धोबन की आखों से आंसू बह निकले, यद्यपि वह मूर्खा थी पर विहुला को समझाने लगी—बेटी! चिन्ता न कर भगवान् ने यह सारी बातें इस लिए उत्पन्न कर दी हैं कि तू शीघ्र यहां पहुंचे। शङ्का का विषय नहीं, अभी इस पुत्र को मरे इतना समय नहीं हुआ कि औषधि लाभदायक न हो इस संसार में जहां दुःख है, वहां सुख भी है, जहां मृत्यु है, वहां जीवन भी है, जहां मधु है वहां मक्खियों डङ्क है, जहां विष है वहां अमृत है, तेरा सौभाग्य यहां लाया ईश्वर इस पुत्र को अच्छा करेगा।

सहानुभूति! तुझ में कितना बल है, तू किस प्रकार फटे हृदयों को जोड़ती है, तुझ से घायल हृदयों की मलहम और भूले भटकों को मार्ग मिलता है।

विहुला ने कर जोड़ कर कहा—माता! तू कोई देवी है, जो मुझ को ऐसी बातें सुना रही है, मैं तो निराश हो चुकी थी। यदि यह जी गए तो मैं तेरी दासी होकर रहूंगी।

अपने घर सेवा के लिये रहने दे पर धोबन ने अस्वीकार किय सेठ इस भक्ति से इतना प्रसन्न हुआ कि एक अपने अच्छ नौका उन के पहुंचाने के निमित्त प्रस्तुत कर दी और उन मिल कर कृतज्ञता का प्रकाश किया दोनों आनन्द पूर्वक घ को सिधारे।

पहिले यह नछुनी नगर में पहुंचे और नाव से उत कर सामन और अमला सुन्दरी से मिलने गए, जब से विहुला चली गई थी, माता रो २ कर दिन काटती थी, जब यह पहुंचे यह रुदन कर रही थी। इन को देख कर झपट कर गोदी में ले लिया, मेरी सावित्री तू सचमुच सावित्री है, तेरे धर्मभाव ने इस को जीवित कर दिया।

नखेन्द्र ने अधिक दिन वहां ठहरना उचित न समझा निदान विदा हो चम्पक नगर में आए, यहां भी शोक मचा था, विहुला पहिले अपनी सास के पांव पड़ी और जब पति के अच्छे होने का समाचार सुनाया यह मारे आनन्द के मूर्छित हो गई और फिर आकर विहुला और पुत्र को छाती से लगा लिया सारे चम्पक नगर में मङ्गल मनाया गया और नगर वासियों ने सती का वृत्तान्त सुना तो उस के दर्शनों के लिए आने लगे।

ईश्वर ने इस प्रकार विहुला पर दया की और बहुत दिनों तक आनन्द पूर्वक जीवित रही। धन दौलत पुत्र कलत्र सब कुछ देखने नसीब हुए, पति से प्रथम परलोक गमन हुआ जिस को हिन्दू स्त्री अच्छा समझती हैं। ईश्वर करे हमारे ग्राहकों में ऐसी भक्ति और पवित्र भाव उत्पन्न हो।

चन्द्रप्रभा पति की तरह भोली नहीं थी। उस ने भीतर
की ओर कुण्डी बन्द करली और खूब कछ पहन कर मरने
मारने को तय्यार हो बैठी।

जी में ठान लिया अप्रधान पति चला गया, कुछ परवाह
नहीं, एक बार मरना होगा आज ही सही, पर कोई मेरा
सतीत्व भङ्ग नहीं कर सकता, कोतवाल द्वार तोड़ कर भी
प्रविष्ट हुआ सिपाही अपनी २ जगह पर चले गए, चन्द्रप्र
कछ काछे चादर ओढ़े खड़ी थी इस में सन्देह नहीं वि
विचारी का कोई आश्रय वा सहारा नहीं था, न कोई शस्त्र
पास था, वह सोच रही थी किस प्रकार दुष्ट से छुटकारा
पावे कुछ समझ में नहीं आता था, तथापि क्षत्रिय भाव
भीतर ही भीतर सतेज हो रहा था।

दुष्ट ने कोठरी में पहुंचते ही अपनी तलवार एक कोने
में रख दी और चन्द्रप्रभा की ओर झुका, उस के नेत्र क्रोध
से लाल हो रहे थे, दोनों में से किसी ने भी बातचीत नहीं
की, कोतवाल ने हाथ बढ़ाया चन्द्रप्रभा ने शेरनी के समान
ऐसा झटका दिया, कि वह सम्भल न सका धरती पर गिर
पड़ा, क्षत्रानी ने तुरन्त तलवार सम्भाली जो कोने में रक्खी
थी। और एक ऐसा हाथ मारा कि दुष्ट की आंतें बाहर निकल
पड़ीं। वह दर्द से कराहने लगा।

चन्द्रप्रभा ने कहा—पापी दुष्ट! यह तेरे पाप का दण्ड
है, तूने मुझे कुटिला स्त्री जाना होगा। अब देखूं और कौन
मेरे सन्मुख आता है?

समझा और न केवल इसे छोड़ दिया, किन्तु इस की वीरता और साहस की प्रशंसा की, मुकद्दमे में सरकार की ओर से चन्द्रप्रभा को चारसौ मुद्रा पुरस्कार दिए गए। कोतवाल मर चुका था, चौकी के और सम्पूर्ण नौकरों को यह वृ दिया गया कि या तो पद भङ्ग कर दिया गया अथवा वदली कर दी गई।

यह सन् १८६६ की घटना है, कतिपय समाचारपत्रों ने भी इस वृत्तान्त को प्रकाशित किया था। हमारी इच्छा है कि जो जन इस वृत्तान्त को पढ़ें वह इस से हितकर शिक्षा लाभ करें॥

सती वृत्तान्त समाप्तम्।